सरल-जैन-धर्म्म

के चारों भागों पर लोकमत

प्रा० रामचन्द्र जी सघी एम ए विशारद भू० पू० प्रिंसिपल हितकारिणी हाईस्कूल—इनमें गूढ़ से गूढ़ विषय बड़ी सरलता से चित्रोंद्वारा समझाये गये हैं। जैनधर्म जिज्ञासुओं के लिये ये पुस्तकें बहुत उपयोगी हैं।

मिस्टर आर जे सकराना लेक्चरार ग्योनाड गियाला जिस्ज कालेज—इनमें जैनधर्म के गूढ़ विषय इतना सरल और रसीली भाषा में हैं कि इन्हें पढ़कर मेरे बच्चे भी बड़ी दिलचस्पी से समझ गये हैं।

तर्करत्न, सिद्धान्तमहोदधि प० माणिकचन्द्र जी न्याया चार्य प्रधानाध्यापक जम्बू महाविद्यालय सहारनपुर—जैन पाठ शालाओं में इनका पठन पाठन अवश्य होना चाहिये। आस्तिकता और जैनधर्म के संस्कार इन में कूट २ कर भरे हुये हैं। आजतक भी इनसे श्रेष्ठ बालकोपयोगी पुस्तकों का प्रकाशन नहीं हो पाया है। मध्य २ में पाठोपयोगी चित्र देकर तो आपने सुवर्ण में सुगन्धि कर दी है।

सिद्धान्तशास्त्री प० नन्हेंलाल जी भू पू प्रधानाध्यापक गोपाल सिद्धान्त विद्यालय मोरेना व प्र० श्र० जैन बालाविश्राम आरा—यदि तमाम विद्यालयों, स्कूलों और पाठशालाओं में ये पुस्तकें पठनक्रम में रक्खी जाय तो जैन और अजैन बालकों का बड़ा लाभ हो।

न्यायकुमुदचन्द्रोदय आदि ग्रन्थों के सम्पादक प० महेन्द्र कुमार जी न्यायतीर्थ बनारस—मेरी राय में आपका इस दिशा में प्रयत्न अच्छा हुआ है। भा० दि० जैन महासभा के ज जनरल सेक्रेटरी व मंत्री मालवा परीक्षालय, जातिभूषण

सरल जैन ग्रन्थमालाका षष्ठ कुसुम

सरल जैन धर्म्म



चौथा भाग



सम्पादक

भुवनेन्द्र "विश्व"

बुढ़वार निवासी

— ० —

प्रकाशक

सरल जैन ग्रन्थमाला, जबलपुर।

प्रथमावृत्ति] १९३४ [मूल्य साढ़े चार आने

नम्र निवेदन

आज आपके सामने बालकोंको सरलतासे ज्ञान प्राप्त होनेके लिये सरलजैनधर्म नामके चार भाग रखते हुये बड़ी प्रसन्नता है।

मुझे इनके लिखनेके लिय समाजके अनेक प्रतिष्ठित विद्वानोंने आग्रह किया था। इसीकारण मुझे ऐसा करनेके लिये विवश होना पड़ा। साथ ही जिनवाणीभूषण दानवीर सेठ रावजी सखारामजी दोशी, मंत्री माणकचंद दि० जैन परीक्षालय शोलापुरवाला द्वारा प्रकाशित मराठीमें "जनबाचन पाठमाला" से अधिक प्रोत्साहन मिला है। इतना ही नहीं, कुछ पाठ और दो चित्र इतने मनोहर मालूम हुये कि मुझे विवश उन्हें ज्यों के त्यों देने पड़े। समाजके विविध प्रतिष्ठित लेखकोंके लेख या कवितायें भी यहाँ २ दनी पडी हैं। इसलिय मैं आप उपर सज्जनोंका अधिक आभारी हूँ।

मैंने इन्हें अपनी समझसे बालकोंके लिय, अधिकसे अधिक सरल रूपमें रखनेका प्रयत्न किया है। मुझे इस आयोजनमें अनेक विद्वानोंने बड़ा सहयोग दिया और बालकोंकी हितकामनाकी दृष्टिसे अपनी अनुभवपूर्ण विविध रचनायें भी भेजनका महती कृपा की है।

आप इतने ही से समझलेंगे कि ये चारों भाग कितने महत्वपूर्ण हैं ? इनमें आकर्षक धार्मिक चित्रोंको देकर बालकोंको सरलता ही न कर पूर्वाचार्य्योंकी कृतियोंको यथाशक्ति अधिक महत्व देनेका प्रयास किया है।

मुझे इसके संशोधन करने और अधिक उपयोगी बनानेमें स्याद्वाद्‌विद्यालय बनारसके प्रधानाध्यापक श्रीमान् प० कैलाशचन्द्रजी न्यायतीर्थ व न्यायाध्यापक श्रीमान् प० महेन्द्रकुमारजी न्यायतीर्थने बड़ा सहयोग दिया है। अत आप महाशयोंका कृतज्ञ हूँ।

यदि इनसे बालकोंके ज्ञानमें कुछ भी प्रगति मिली तो मैं अपना प्रयास सफल समझूँगा। विद्वानोंसे नम्र निवेदन है कि वे सुधारणीय विषयोंसे सूचित करनेका अवश्य कष्ट उठावेंगे, महती कृपा होगी।

विनीत—
सम्पादक व प्रकाशक

चित्र सूची

नम्र निवेदन

आज आपके सामने बालकोंको सरलतासे ज्ञान प्राप्त होनेके लिये सरलजैनधर्म नामक चार भाग रखते हुये बड़ी प्रसन्नता है।

मुझे इन्हें लिखनेके लिये समाजके अनेक प्रतिष्ठित विद्वानोंने आग्रह किया था। इसीकारण मुझे ऐसा करनेके लिये विवश होना पड़ा। साथ ही जिनवाणीभूषण दानवीर सेठ रावजी सखारामजी दोशी, मंत्री माणिकचंद दि० जैन परीक्षालय शोलापुरवालों द्वारा प्रकाशित मराठीमें "जनवाचन पाठमाला" से अधिक प्रोत्साहन मिला है। इतना ही नहीं, कुछ पाठ और दो चित्र इतने मनोहर मालूम हुये कि मुझे विवश उन्हें ज्यों के त्यों चुन पड़े। समाजके विविध प्रतिष्ठित लेखकोंके निबन्ध या कवितायें भी कहीं २ देना पड़ी हैं। इसलिये मैं आप उदार सज्जनोंका अधिक आभारी हूँ।

मैंने इन्हें अपनी समझमें बालकोंके लिये, अधिकसे अधिक सरल रूपमें रखनेका प्रयत्न किया है। मुझे इस आयोजनमें अनेक विद्वानोंने बड़ा सहयोग दिया और बालकोंकी हितकामनाकी दृष्टिसे अपनी अनुभवपूर्ण विविध रचनायें भी भेजनेकी महती कृपा की है।

आप इतने ही से समझलेंगे कि ये चारों भाग कितने महत्वपूर्ण हैं। इनमें अनेक धार्मिक चित्रोंको देकर बालकोंको सरलता प्राप्त कर पूर्वाचार्योंकी कृतियोंको यथाशक्ति अधिक महत्व देनेका प्रयास किया है।

मुझे इनके संशोधन करने और अधिक उपयोगी बनानेमें स्याद्वादविद्यालय बनारसके प्रधानाध्यापक श्रीमान् प० कैलाशचन्द्रजी न्यायतीर्थ व न्यायाध्यापक श्रीमान् प० महेन्द्रकुमारजी न्यायतीर्थने बड़ा सहयोग दिया है। अत आप महाशयोंका कृतज्ञ हूँ।

यदि इनसे बालकोंके ज्ञानमें कुछ भी प्रगति मिली तो मैं अपना प्रयास सफल समझूँगा। विद्वानोंसे नम्र निवेदन है कि वे सुधारणीय विषयोंसे सूचित करनेका अवश्य कष्ट उठावेंगे, महती कृपा होगी।

विनीत—
सम्पादक व प्रकाशक

चित्र सूची

विषयानुक्रमणिका

※ शुद्धिपत्र ※

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७३		[illegible]	[illegible]
१४	११	आश्विन	कार्तिक
२४	१५	अँगुली	अँजुली
३६	१४	जीवन	जीतने
४१	१०	अलाकाकार	सालाकाकार
४४	१४	पर्वेन पहाड़	पर्वत पहा
४४	२१	पंजाब से बंगाल तक	बंगाल या पंजाब में
४४	२३	नन्दिय	नदियाँ
४४	२३	बहती हैं,	बहती हुईं
४५	१०	चालीस हजार	चालीस
४६	६	कर्मभूमि की	कर्मभूमिकी सी

नमः श्री परमात्मने

सरल जैनधर्म



चौथा भाग



पहला पाठ

अनित्यता ⊛

[ले०—श्री० शोभाचन्द्र भारिल्ल, न्यायतीर्थ]

अमर मानकर निज जीवनको पर-भव हाय भुलाया,
चाँदी-सोनेके टुकड़ोंमें फूला नहीं समाया।
देख मूढ़ता यह मानवकी उधर काल मुस्काया,
अगले पल ले चला यहाँपर नाम निशान न पाया! ॥१॥
बड़े भोर चहुँ ओर ललाई जो भूपर छाई थी,
नभसे उतर प्रभा दिनकरकी मध्य दिवस आई थी।
सन्ध्या-राग रँगीला मनको तुरत मोहने वाला,
हाय! कहाँ अब जब फैला है यह भीषण तम काला! ॥२॥

पांच अक्षरोंका मन्त्र —अ सि आ उ सा ।
चार अक्षरोंके मन्त्र —अरहन्त, असि साहू ।
दो अक्षरोंके मन्त्र —अर्हं ह्रीं, सिद्ध ।
एक अक्षरका मन्त्र :—ओम् ।

ये सब मन्त्र परमेष्ठीवाचक हैं। इनके सिवाय अनेक मन्त्र हैं। "ओम्" से पाँचों परमेष्ठियोंका ज्ञान कैसे होता है यह नीचे स्पष्ट करते हैं।

सिद्ध परमेष्ठीको अशरीरी और साधुको मुनि भी कहते हैं। इस तरह सब परमेष्ठियोंके पहले अक्षरोंको मिलाकर "ओम्" बन जाता है :—

अरहन्त	अ	आ	आ	ओ	ओम्
अशरीर	अ				
आचार्य्य	आ				
उपाध्याय	उ				
मुनि	म्				

अब मालाके १०८ दानोंका क्या मतलब है, यह बताते हैं।

सरंभ, समारंभ, आरंभ = ३
मन, वच, तन $= 3 \times 3 = 9$
कृत, कारित, अनुमोदन $= 3 \times 9 = 27$
क्रोध, मान, माया, लोभ $= 4 \times 27 = 108$

अर्थात् दोष १०८ तरहसे बन जाते हैं, यह तालिकासे स्पष्ट है। इसलिये मन्त्र १०८ बार जपा जाता है।

किसी भी मन्त्रके पहले और पीछे "ओं ह्रीं सम्यग्दर्शनज्ञान-चारित्रेभ्यो नमः" तीन बार बोलना चाहिये। इसलिये मालाके ऊपर तीन दाने और होते हैं।

जाप खड़े होकर और बैठकर दोनों तरह दी जा सकती है। मालाको जमीनपर नहीं गिरने देना चाहिये अथवा उसका अनादर नहीं करना चाहिये।

प्रश्न

१ जाप देने से क्या लाभ है?
२ जाप देने के कौन कौन मन्त्र हैं?
३ "ओम्" में पञ्चपरमेष्ठीका ज्ञान कैसे होता है?
४ जापमें १०८ दानोंका और तीन दानोंका क्या प्रयोजन है?
५ जाप देनेसे किसको क्या लाभ हुवा ऐसी कोई कथा सुनाओ और जाप किस आसनसे देना चाहिये?

तीसरा पाठ

गोम्मटस्वामी

(ले०—जिनवाणीभूषण सेठ रावजी सखारामजी दोशी)

मैसूर प्रान्तके हासन जिलेमें "चन्नराय पट्टन" नामका एक तालुका (परगना) है। इस तालुकामें श्रवणबेलगुल नामकी बस्ती है। इसके दोनों ओर दो सुन्दर एवं भव्य पहाड़ियाँ हैं, उन दोनोंके बीचमें यह बस्ती (गाँव)

है। इस गाँवमें स्वच्छ जलका एक तालाब है। इस तालाबके कारण ही "बेलगुल" नाम पड़ा।

"बेलगूल" यह कनाड़की भाषाका शब्द है। इसमें "बेल" का अर्थ सफेद और "गोल" का अर्थ तालाब है। श्रवणबेलगूलको "गोमटपुर" भी कहते हैं। किसी किसी शिलालेखमें इसे "दक्षिणकाशी" भी कहा है। यह सदर्न मराठा रेलवेके हासन स्टेशनसे ३० मील और मद्रारगिरिसे १२ मील है। दोनों स्टेशनोंसे मोटर, ताँगा और बैलगाड़ियाँ किरायेसे मिलती हैं। स्टेशनसे श्रवण बेलगुल तक पक्की सड़क है। गाँवमें और पर्वतोंमें सब ३० जिनमन्दिर हैं। उनमें सोना चाँदी और हीरा माणिकको अनेक मूर्तियाँ हैं। यहाँ श्रीचारुकीर्तिजी महाराज भट्टारकका प्राचीन मठ है। इसमें ताड़पत्र पर लिखे हुये अनेक दिगम्बर जैन ग्रन्थ हैं।

गाँवके दक्षिणकी ओरकी पहाड़ीको दाडुबेट्टा (बड़ी पहाड़ी) और उत्तरकी पहाड़ीको चिक्कबेट्टा (छोटी पहाड़ी) कहते हैं। बड़ी पहाड़ी *विन्ध्यगिरि* और छोटी पहाड़ी *चन्द्रगिरि* के नामसे प्रसिद्ध है। दोनों पहाड़ियोंके बीचका प्रदेश इतना सुन्दर है कि सारे मैसूर प्रान्तमें इतना सुन्दर कोई दूसरा प्रदेश नहीं है। चन्द्रगिरि पर अनेक शिलालेख और मन्दिर हैं। मौर्यवंशके राजा *चन्द्रगुप्त* ने राज्यका परित्याग कर यहीं तपश्चरण किया था। उन्हींके नामसे *चन्द्रगिरि* प्रसिद्ध हुआ है। इसी पहाड़ी पर चन्द्रबस्ती

नामक मन्दिर चन्द्रगुप्तने ही बनवाया था, ऐसा शिलालेख प्राप्त हुआ है। सुनते हैं कि भद्रबाहुने भी इसी पहाड़ीकी गुफामें तपश्चरण कर शरीरका परित्याग किया है। दक्षिणको ओर विन्ध्यगिरि पहाड़ी पर श्री १००८ बाहुबली की ५७ फुट ऊँची अत्यन्त मनोज्ञ प्रतिमा है। इसी को गोम्मटस्वामी भी



विवरण-कर्मके पाठमें देखें।

कहते हैं। यह मूर्त्ति बहुत प्राचीन है। इसकी प्रतिष्ठा चामुण्डराय नामक जैन राजाने ईस्वी सन् ६८३ में कराई थी, ऐसा शिलालेखोंसे मालुम होता है।

इसी प्रतिमाका प्रत्येक बारहवें वर्ष पञ्चामृत महाभिषेक होता है। इस अवसर पर समस्त भारतवर्षके जैनी लाखोंकी संख्यामें दर्शनार्थ आते हैं।

इतनी विशालकाय अखंड पाषाणकी प्रतिमा संसारमें दूसरी नहीं है। प्रतिमाका प्रतिबिम्ब नहीं पड़ता। इस मनोज्ञमूर्त्तिके पवित्र दर्शनसे नेत्र सफल करने चाहिये।

यह प्रतिमा संसारको त्याग और तपस्याका साक्षात् उपदेश दे रही है।

प्रश्न

१ श्रवणबेलगुल नाम कैसे पड़ा? और यह कहाँ है?

२ चन्द्रगिरि पर्वत क्यों प्रसिद्ध हुआ?

३ गोम्मटस्वामीकी मूर्ति किस पर्वत पर है और इसकी प्रतिष्ठा कब हुई?

४ गोम्मटस्वामीकी मूर्त्तिके विषयमें क्या जानते हो?

५ विन्ध्यगिरि और चन्द्रगिरिको कर्नाटकीमें क्या कहते हैं और क्यों?

चौथा पाठ

पञ्चपरमेष्ठी

परमपद अर्थात् उत्कृष्ट पदमें विराजनेवाले *परमेष्ठी* कहलाते हैं। ये पाँच होते हैं। अरहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु। इनमें अरहन्त और सिद्ध परमेष्ठी को *भगवान्*, *परमात्मा* अथवा *देव* कहते हैं और आचार्य, उपाध्याय और साधु ये *साधु* अथवा *गुरु* कहलाते हैं।

इन्हीं पाँचो परमेष्ठियोंको णमोकारमन्त्रमें नमस्कार किया गया है।

तीर्थकर आदि अरहन्त कहे जाते हैं। इन्होंने ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अन्तराय इन चार घातिया कर्मों का नाश किया और सिद्ध परमेष्ठी आठों कर्मोंका नाश कर देते हैं। इसलिये अरहंतों की अपेक्षा सिद्ध भगवान् अधिक पूज्य होने पर भी अरहन्त भगवान् के द्वारा संसार का साक्षात् उपकार होता है। इसलिये पहले इन्हीं को नमस्कार किया जाता है।

अब संक्षेपसे इनका स्वरूप बताते हैं —

१ अरहंत—जो ऊपर कहे हुये चार घातिया कर्मोंको नष्टकर चुके हो, अनंतदर्शन, अनन्तज्ञान, अनंतसुख और अनन्तवीर्य सहित हो, अस्थि, मज्जा आदि सात धातुरहित परमौदारिक शरीर धारण करते हो और जन्म मरण आदि अठारह दोषोंसे रहित हो उन्हें अरहंत परमेष्ठी कहते हैं।

इनमें ३४ अतिशय (१० जन्म के, १० ज्ञान के और १४ देवकृत), ८ प्रातिहार्य और ४ अनंतचतुष्टय इस प्रकार ४६ गुण होते हैं।

२ *सिद्ध* —ये ज्ञानावरण आदि आठ कर्मो का नाश करते हैं, लोक और अलोकको जानने देखनेवाले होते हैं और देहरहित होकर भी पुरुषके अंतिम आकारके होते हैं। ये ही सिद्ध परमेष्ठी कहे जाते हैं।

इनमें आठों कर्मोंके अभावसे ये आठ गुण प्रकट होते हैं:—क्षायिक सम्यक्त्व, अनन्तदर्शन, अनन्तज्ञान, अगुरुलघुत्व, अवगाहनत्व, सूक्ष्मत्व, अनन्तवीर्य और अव्याबाध।

३ *आचार्य*—दर्शन, ज्ञान, वीर्य, चारित्र और तप इन पाँच आचारोंमें जो मुनि स्वयं लीन रहें और दूसरोंको इनमें लीन करें उसे आचार्यपरमेष्ठी कहते हैं।



विवरण-कर्मके पाठमें देखो।

इनके ३६ गुण इस प्रकार हैं—१२ तप १० धर्म, ५ आचार, ६ आवश्यक और ३ गुप्ति।

४ *उपाध्याय*—जो सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र सहित हैं और सदा धर्मका उपदेश देते [illegible] उन्हें

उपाध्याय परमेष्ठी कहते हैं। ये ११ अङ्ग और १४ पूर्वोंका ज्ञान रखते हैं। यही २५ गुण इनमें होते हैं।

५ साधु—जो सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान सहित मोक्षमार्गके कारणभूत सम्यक्चारित्रको साधता है वह साधुपरमेष्ठी कहलाता है।

इनके २८ मूलगुण होते हैं। ५ महाव्रत, ५ समिति, ५ इन्द्रियविजय, ६ आवश्यक और ७ शेष गुण।*

प्रश्न

१ परमेष्ठी किसे कहते हैं, वे कितने होते हैं?
२ अरहन्तपरमेष्ठी किसे कहते हैं? चार अरहन्तोंके नाम बताओ।
३ सिद्धपरमेष्ठी किसे कहते हैं? इन्हें बता सकते हो कहाँ रहते हैं?
४ आचार्यपरमेष्ठी किसे कहते हैं?
५ उपाध्यायपरमेष्ठी किसे कहते हैं?
६ साधुपरमेष्ठी किसे कहते हैं?
७ परमेष्ठियोंको नमस्कार और उनकी पूजा करनेसे क्या लाभ है?

पाँचवाँ पाठ

वीर-शासन

(ले०—प० हरिप्रसाद शर्मा 'अविकसित')

जिसकी दया दृष्टिसे हिंसक जन्तु बने थे दया निधान।
किया असंख्यों जीव धारियोंका जिसने जगके कल्याण ॥

*विशेष जाननेके लिये "इष्टछत्तीसी" देखिये।

सुर, श्रावक औ जैन, भगी, जल थल पावन देते थे
एक ठौर दिन रात मनाते मेल मोहिये, रहते थे ।
हिंसालों जीवोंको है डाला जिसने निराला ।
वन्दनीय उस वीर प्रभुका धन्य धन्य वह प्रिय शासन ।
उच्च-नीचका भेद मिटाकर जोड़ा मानवका सम्बन्ध ।
भरदी नर-नारी पुतलोंमें दयाभावकी नूतन गन्ध ॥
राग-द्वेष कुभाव मिटाकर हृदय सुमन सब दिये खिला ।
बिखरे मानवताकी मालाके मोती सब दिये मिला ॥
दिया अहिंसाकी देवीको अति ऊँचा पावन आसन ।
वन्दनीय उस वीर प्रभुका धन्य धन्य वह प्रिय शासन ।
जिनके चरणोंपर इन्द्रादिक नाना रत्न चढ़ाते थे ।
ध्यानमग्न जिनके अंगोंसे वन-पशु देह खुजाते थे ॥
बाघ निदाघ-समयमें जिनकी छायाको अपनाते थे ।
नाग सूँड रख निज मुनिवरके चरणोंमें सो जाते थे ॥
खग करते थे निकट बैठकर णमोकारका उच्चारण ।
वन्दनीय उस वीर प्रभुका धन्य धन्य वह प्रिय शासन ॥३॥
खिल उठती थी ऊषा देखकर जिनका दिव्य अलौकिक तेज ।
प्रकृति बिछा देती थी नीचे हरी मखमली दूबा सेज ॥
मेघ तान देते थे जिनके सिरपर शीतल छाया छत्र ।
दर्शन करने मानो प्रभुके होते थे नभपर एकत्र ॥
प्रभु-तन आभा बिजली बनकर करती थी नभमें गर्जन ।
वन्दनीय उस वीर प्रभुका धन्य धन्य वह प्रिय शासन ॥४॥

छठवाँ पाठ

जैन-पर्व

(ले०—जिनवाणीभूषण सेठ रावजी सखारामजी दोशी)

जैनी त्योहारोंको पर्व कहते हैं। प्रत्येक महीनाकी अष्टमी और चतुर्दशी पर्वतिथि कहलाती है। इनमें श्रावक एकाशन, उपवास अथवा किसी रसका त्याग वगैरह किया करते हैं और दिनभर धर्मध्यानपूर्वक बिताते हैं।

अष्टाह्निका पर्व वर्षमें तीन बार मनाया जाता है। आषाढ़, कार्तिक और फाल्गुनकी शुक्ला (सुदी) अष्टमीसे पूर्णिमा (पूनम) तक आठ दिन यह पर्व रहता है। इन आठ दिनोंमें नन्दीश्वरपूजा होती है। कितने ही श्रावक श्राविकायें आठ दिनका अथवा अपनी शक्तिके अनुसार उपवास, एकाशन अथवा ब्रह्मचर्य्य आदिका नियम करते हैं। इस पर्वमें, नन्दीश्वरद्वीपके बावन अकृत्रिम जिनमन्दिरोंमें विराजमान प्रतिमाओंका पूजन, चारों प्रकारके देव आकर करते हैं। वहाँ मनुष्य नहीं पहुँच सकते। इसलिये वे जिनमन्दिरोंमें ही नन्दीश्वर प्रतिमाकी स्थापना कर पूजन करते हैं। इन दिनोंमें कोल्हापुर, साँगली, बेलगाँव और दक्षिण कर्नाटकमें अच्छा उत्सव मनाते हैं।

पर्युषणपर्व भाद्रपद [illegible] पञ्चमीसे शुक्ला चतुर्दशी तक दश दिन मनाते हैं [illegible] ी दशलाक्षणिकपर्व कहते हैं।

इन दिनोंमें उत्तमक्षमा, मार्दव, आर्जव, सत्य, शौच, संयम, तप, त्याग, आकिञ्चन्य और ब्रह्मचर्य इन दश धर्मोंकी प्रतिदिन पूजा होती है। प्रतिदिन अभिषेक और तत्त्वार्थसूत्रका अर्थ बाँचा जाता है। यह पर्व समस्त भारतवर्षके प्रायः जैनों द्वारा बहुत आनन्द और भक्तिपूर्वक मनाया जाता है। इन दिनोंमें ब्रह्मचर्य, एकाशन, उपवास आदि अनेक धर्माचरण किये जाते हैं और हजारोंकी संख्यामें प्रतिवर्ष उपयोगी संस्थाओंके लिये दान किया जाता है। इसी प्रकार माघ और चैत्र सुदी पंचमीसे भी दस दिन तक यह पर्व मनाया जाता है।

कार्तिक वदी अमावास्याके सबेरे चाँव बजे श्री महावीर स्वामी मोक्ष पधारे। इसी समय श्रावक, निर्वाण लड्डू चढाते हैं। इस समय देवोंने रत्नमयी दीपकोंसे महावीर स्वामीकी पूजा की थी। इसीकारण यह पर्व प्रसिद्ध हुआ। आज महावीर स्वामीकी पूजा और उनका चरित्र पढ़ा जाता है।

महावीर स्वामीकी निर्वाणभूमि पावापुरीमें आज विशेष उत्सव मनाया जाता है।

वैशाख शुक्ला तृतीयाको हस्तिनापुरमें (मेरठ) राजा श्रेयांसने श्री आदिनाथ भगवान्को इक्षुके रसका आहार कराया था। इसी दिनसे आहारदानकी प्रथा प्रचलित हुई। आज आदिनाथ भगवान्की प्रतिमाका इक्षुके रससे अभिषेक करते हैं। इस पर्वको *अक्षयतृतीया* कहते हैं।

ज्येष्ठ शुक्ला पञ्चमीको *श्रुतपञ्चमी* कहते हैं। इसीदिन दिगम्बर जैन आचार्योंने शास्त्रोंकी रचना की थी। इसी लिये श्रुतपञ्चमी कहते हैं। आज मन्दिरोंके ग्रन्थोंको, भंडारों और अलमारियोंमेंसे बाहर निकाल कर साफ करते हैं। फटे पुराने वेष्टन आदि बदलते हैं और ग्रन्थ रखनेकी अलमारी आदिका ठीक करते हैं तथा शास्त्रकी पूजन करते हैं।

चैत्र शुक्ला त्रयोदशीको *महावीर जयन्ती* मनाते हैं। आज जैनियोंके अन्तिम तीर्थंकर श्री महावीरस्वामीका जन्म हुआ था। इसलिये आज उनका जीवनचरित्र पढ़ते हैं और उनकी पूजा करते हैं तथा जगह २ विद्वान् लोग महावीर-स्वामीके जीवनचरित्रपर प्रकाश डालते हैं। इन्होंने संसारके प्राणियोंको हितके मार्गका उपदेश दिया है।

सातवाँ पाठ

छह कर्म

बालको! तुमको आलोचना पाठ याद है। उसका मतलब भी समझते हो। उसमें सवेरेसे शामतक एक गृहस्थसे अनेक प्रकारकी हिंसायें हो जाती हैं अथवा गृहस्थसे बहुत अपराध बन पड़ते हैं। ये अपराध आत्माको पवित्र नहीं बनने देते। गृहस्थोंकी छह आवश्यक क्रियायें बताते हैं, जिनका आचरण करनेसे गृहस्थ अपना कर्तव्य पालन कर सकता है।

देवपूजा गुरूपास्तिः स्वाध्यायः संयमस्तपः ।
दानं चेति गृहस्थानां षट्कर्म्माणि दिने दिने ॥

अर्थ—जिनेन्द्रदेवकी पूजा करना, गुरुओंकी सेवा करना, स्वाध्याय करना, संयमका पालन करना, तपका अभ्यास करना और दान देना ये गृहस्थोंके छह आवश्यक कर्म हैं।

देवपूजा—का अर्थ अरहन्त परमेष्ठी (भगवान्) और सिद्ध परमेष्ठीकी पूजा करना है। श्रीऋषभ आदि चौबीस तीर्थंकर देव कहलाते हैं। पूजाका अर्थ है, उनमें विद्यमान अनन्त गुणोंका वर्णन करना और उनके गुणोंके प्राप्त करनेकी सदा भावना करना।

आजकल वे तीर्थंकर नहीं हैं। इसलिये उनके आकारकी प्रतिमायें बनाकर उनमें तीर्थंकरोंके गुणोंकी स्थापना करते हैं। स्थापनाका अर्थ तीर्थंकरोंके गुणोंको प्रतिमामें विद्यमान समझना है। इसलिये जैसे साक्षात् तीर्थंकरोंके दर्शनसे आनन्द होता था वैसा ही आनन्द मनाना और आदर सत्कार करना उनकी पूजा कहलाती है। पूजा द्रव्यसे अर्थात् जल चन्दन आदि आठ द्रव्योंसे और अपने पवित्र भावोंसे होती है। श्रावकोंको द्रव्यपूजा और मुनियोंको भाव पूजा करनी चाहिये।

पूजा करनेसे कर्मोंका नाश होता है। कर्मोंका नाश होनेपर प्रत्येक जीव, संसार पूज्य बन जाता है। यही पूजा करनेका उद्देश्य है।

जहाँ मन्दिर न हो वहाँ भगवान् की परोक्ष पूजा करे। स्तोत्र पढ़े, सामायिक करे, जाप देवे और शास्त्रका स्वाध्याय कर ले।

(२) गुरुभक्ति—गुरु शब्दका अर्थ आजकलके पढ़ाने वाले गुरु ही नहीं किन्तु —

"विषयाशावशातीतो निरारम्भोऽपरिग्रहः ।
ज्ञानध्यानतपोरक्तस्तपस्वी स प्रशस्यते ॥"

अर्थ—जो पाँच इन्द्रियोंके वशमें न हो, आरम्भ परिग्रहसे रहित हो, ज्ञान और ध्यानमें लीन रहता हो उसे तपस्वी, साधु मुनि अथवा गुरु कहते हैं। ऐसे पूज्य गुरुओं की भक्ति करना चाहिये। भक्तिका मतलब उनकी संगति करना, उनकी वैयावृत्य करना और उनके सदुपदेशोंसे लाभ उठाना है। साक्षात् उपकार करने वाले गुरु ही हैं।

सच्चे गुरु ही तरन-तारन कहलाते हैं। स्वयं संसाररूपी समुद्रसे पार होते हैं और दूसरोंको उपदेश दे कर पार कराते हैं।

(३) स्वाध्याय—जैनधर्मके स्वरूपको प्रकट करने वाले शास्त्रोंको चौकी पर आदर पूर्वक विराजमान कर स्वयं पढ़ना और दूसरोंको सुनाना स्वाध्याय कहलाता है।

स्वाध्याय करनेसे ज्ञान बढ़ता है। विषयकषायोंसे प्रवृत्ति हटती है। परिणाम निर्मल हो जाते हैं।

(४) संयम—पाँचों इन्द्रियों और मनको वशमें करना संयम कहलाता है। इसके लिये काममें आने वाली भोग और उपभोग की वस्तुओंका प्रतिदिन नियम करना चाहिये। अनाज पान की चीजें जो एक बार काममें आइ जा सकें, वे भोग कहते हैं और जो बार २ काममें आइ जा सकें उप-भोग कहते हैं। जैसे वस्त्र सवारी आदि। प्राणियों की रक्षा करने की प्रतिज्ञा करनी चाहिये। यही संयम कहलाता है। संयमके पालनसे, संसारसे छुटकारा हो जाता है। संयम मनुष्यगतिमें ही पाला जा सकता है। इसलिये जहाँ तक बने संयमसे रहना चाहिये। जिन कामोंसे इन्द्रियोंको अच्छा मालूम होता है वे सब विषय संसारके बढ़ाने वाले हैं। जैसे खट्टे तीखे और मनमाने खिलौने, हलुवा, मिठाई चरपरा खाना, इत्र फूल वगैरह सूँघना, नाटक सिनेमा और वेश्याओंके नाच वगैरह देखना, वस्त्रोंके गाने, राग रिवाज सुनना और अच्छा लगने पदार्थ वगैरहसे बचते रहना चाहिये। सच्चे मुनि ऐसा ही करते हैं। हमें भी ऐसा अभ्यास करना चाहिये।

(५) तप—आत्मा की ध्यानरूपी अग्नि में आत्मा के तपाना तप है। इससे आत्मा का बल बढ़ता है। जैसे नहीं खाना, कमखाना, चार रस (मिठाई, खटाई, दूध तेल, घी आदि) छोड़ देना, एकान्त में सोना और सामायिक अर्थात् ध्यान लगाना आदि। इसी प्रकार किये हुए अपराधों का गुरु या भगवान् के सामने प्रकट करना,

देव, शास्त्र और गुरु का आदर करना, उनकी सेवा करना, शास्त्रों का मनन करना, मल मूत्र का निर्जंतुस्थान में छोड़ना और ध्यान करने वगैरहसे अन्तरङ्गकी शुद्धि होती है। इन सबसे आत्मा निर्मल बनता है।

(६) दान—अपने और दूसरेके उपकारके लिये, किसी प्रत्युपकार यानी बदलेमें यश वगैरहकी इच्छा न कर, आहार, वस्त्र, औषधि और शास्त्रका देना दान कहलाता है। मुनि, व्रती श्रावक आदि सम्यग्दृष्टी उत्तम पुरुषोंको भक्तिपूर्वक दान करना पात्रदान और दीन, दुःखी, लूले, लँगडे, कोढ़ी, और असमर्थोंको दान करना करुणा-दान कहलाता है।

दान देय मन हरष विशेषै। इह भव परभव जस सुख देखै।

अर्थात् दान देनेसे मनमें प्रसन्नता होती है। दानसे इस भवमें और दूसरे भवमें यश तथा सुख मिलता है।

प्रश्न

१ गृहस्थोंके अथवा श्रावकोंके कितने दैनिक कर्म्म होते हैं? इनके पालनसे क्या लाभ है?

२ इन्हें दैनिक कर्म्म क्यों कहते हैं? ये कितने होते हैं नाम बताओ।

३ देवपूजा किसे कहते हैं? क्या आजकल देव हैं? फिर उनकी पूजा कैसे करते हो?

४ स्वाध्यायका क्या अभिप्राय है? इससे क्या लाभ है?

५ दान किसे कहते हैं? करुणादानका क्या मतलब है?

आठवाँ पाठ

ग्यारह प्रतिमायें

प्रतिमा का बहुतेरा श्रीजिनमन्दिरमें विराजमान अर्हन्त भगवान्‌का ज्ञान होता है लेकिन यहाँ यह आशय नहीं है।

प्रतिमाका स्वरूप

संयम अंश जग्यो जहाँ, भोग अरुचि परिणाम।
उदय प्रतिज्ञाको भयो, प्रतिमा ताको नाम॥

(कविवर बनारसी दास)

यहाँ प्रतिमाका अर्थ श्रावकोंके गुणस्थान अथवा दरजा है। इन्हींको व्रत भी कहते हैं। ये ग्यारह होते हैं —

दर्शन धर व्रत पालैं, सामायिक दोष टालैं, पोसा माँडैं सचित्तकौ त्याग लौ वगायवैं। रात्रिभुक्ति परिहरैं, ब्रह्मचर्य नित धरैं, आरम्भको त्याग करैं, मन वच कायवैं। परिग्रह काजैं टारैं अघ अनुमति छाँरैं, स्वनिमित्त दूरे टारैं, आतम लौ लायकैं। सब एकादश भेद, प्रतिमा सुशर्म गेह, धारैं देशव्रती नेह धर्म उर बढ़ायकैं।

श्रावक उन्नति करता हुआ पहलीसे दूसरी, दूसरीसे तीसरी और तीसरीसे चौथी इस प्रकार ग्यारहवीं प्रतिमा तक चढ़ता है। इसके बाद मुनि अथवा साधु हो सकता है।

आगेकी प्रतिमाओंको धारण करनेवालेको पिछली प्रतिमाओंका धारण करना आवश्यक है।

१ *दर्शनप्रतिमा*—सम्यग्दर्शन सहित अष्टमूल गुण धारण करना और बाईस अभक्ष्य तथा सात व्यसनोंका त्याग करना दर्शन प्रतिमा है। दर्शनप्रतिमावालेको *दार्शनिकश्रावक* कहते हैं। यह सदा संसारसे उदासीन, दृढ़ निश्चयवाला और सांसारिक फलकी इच्छा नहीं करनेवाला होता है।

२ *व्रतप्रतिमा*—पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत। इन बारह व्रतोंका अतीचाररहित पालन करना व्रत प्रतिमा है। यह प्रतिमाधारी *व्रती श्रावक* कहलाता है।

३ *सामायिक प्रतिमा*—प्रतिदिन प्रातःकाल, मध्याह्नकाल और सायंकाल दो दो घड़ी विधिपूर्वक अतीचार रहित सामायिक करना सामायिक प्रतिमा कहलाती है।

सामायिककी विधि इस प्रकार है —पहले पूर्व दिशाकी ओर मुँहकर खड़ा होवे। फिर तीन आवर्त और एक नमस्कार कर क्रमसे दक्षिण, पश्चिम और उत्तर दिशामें तीन तीन आवर्त और एक एक नमस्कार करे। बादमें पूर्व दिशाकी ओर मुँहकर खड़ा हो या बैठे। मन, वचन और कायको शुद्धकर पाँच पापोंका त्याग करना, सामायिक पाठ बोलना, णमोकारमन्त्रकी जाप देना, भगवान्‌की परमशान्त मुद्रा तथा चेतना स्वरूप शुद्ध आत्माका एवं कर्मोंके उदय रूप रस और बारह भावनाओंका चिन्तवन और बादमें खड़ा होकर नौ बार णमोकारमन्त्र पढ़कर नमस्कार करना चाहिये।

सामायिकका उत्कृष्ट समय छह घडी मध्यम चार घडी और जघन्य दो घडी है। चौबीस मिनिटकी एक घडी होती है।

४ प्रोषधप्रतिमा—प्रत्येक अष्टमी और चतुर्दशीको १६ प्रहरतक अतीचार रहित प्रोषधोपवास करना और इन दिन व्यापार, आरम्भ भोजन नाहन आदि सब भोगोपभोग सामग्रीका त्यागकर एकान्तमें स्वाध्याय व धर्मध्यान करना प्रोषधप्रतिमा है। मध्यम १२ और जघन्य ८ प्रहरका प्रोषध होता है।

५ सचित्तत्यागप्रतिमा—कच्चे मूल (आलू, मूली गाजर आदि) फल शाक, शाखा, कोंपल, अकुर, फूल और कन्द वगैरह नहीं खाना सचित्तत्याग है।

जीवसहित पदार्थको सचित्त कहते हैं। यह सचित्त त्यागप्रतिमा है।

६ रात्रिभोजनत्यागप्रतिमा—मन, वचन, कायसे और कृत कारित अनुमोदनासे रातमें सब प्रकारके आहारका त्याग करना रात्रिभोजनत्यागप्रतिमा है। सूर्यास्त होनेसे दो घडी पहले और सूर्योदय होनेके दो घडी बादतक आहार का त्याग करना चाहिये।

आहार चार प्रकारका होता है—१ अन्न (दाल भात आदि), २ पान (दूध पानी आदि), ३ खाद्य (पेडा बर्फी आदि), और ४ लेह (रबडी आदि)।

इसे "दिवामैथुनत्याग" प्रतिमा भी कहते हैं। इसका अर्थ दिनमें मैथुनका त्याग करना है।

रात्रि भोजन त्यागसे जीवोंकी हिंसा बचती है और प्राणियोंपर दयाभाव पैदा होता है।

७ *ब्रह्मचर्यप्रतिमा*—मन, वचन, काय और कृत कारित अनुमोदनासे स्त्रीमात्रका त्याग करना ब्रह्मचर्यप्रतिमा है।

स्त्रियोंकी कथा आदि करना भी ठीक नहीं है। इसे यह सोचना चाहिये कि स्त्री शरीर मलका कारण है, मलकी खानि है, इससे मूत्र आदि मल बहता रहता है, दुर्गन्ध भरा है और भयङ्कर है। ऐसे अङ्गका स्पर्श भी नहीं करना चाहिये।

(८) *आरम्भत्याग प्रतिमा*—हिंसाके कारणस्वरूप नौकरी, खेती, व्यापार आदि आरम्भी कामोंका मन, वचन, काय और कृतकारित अनुमोदनासे त्याग करना आरम्भत्याग प्रतिमा है। इस प्रतिमाका धारी स्नान, दान और पूजन आदि कर सकता है।

(९) *परिग्रहत्याग प्रतिमा*—केवल वस्त्र रखकर धन धान्य दासी दास आदि दस प्रकारके बाह्य परिग्रहोंसे मोहका त्याग करना परिग्रहत्याग प्रतिमा है। इसे छलकपटसे रहित होना चाहिये और परिग्रहकी इच्छा नहीं रखनी चाहिये।

(१०) *अनुमतित्याग प्रतिमा*—जो खेती आदि कामों, धन धान्य आदिमें और विवाह आदि कामोंमें रागद्वेष रहित अथवा ममता रहित हो, उसे अनुमतित्याग प्रतिमाधारी कहते हैं।

यह सांसारिक कार्योंकी अनुमोदना भी नहीं कर सकता। वह अपने लिये भोजन आदिके लिये कुछ नहीं कह सकता। उदासीन होकर, प्राय चैत्यालय अथवा मठ आदिमें रहकर धर्मध्यानमें तत्पर रहता है।

(११) *उद्दिष्टत्याग प्रतिमा*—जो घर छोड़कर साधुओंके आश्रममें जाकर गुरुओंसे व्रत ग्रहण करे, लंगोट अथवा खण्डवस्त्र (जो शरीरकी लम्बाई से कुछ कम हो) धारण करे, भिक्षा लेकर भोजन करे, तप करे और व्रतोंको ग्रहण करे उसे उद्दिष्टत्याग प्रतिमा कहते हैं।

ये, श्रावकके घरपर अपने लिये तैयार किया हुआ आहार करते हैं इनके वास्ते नहीं बनाया जाता।

इस प्रतिमाके दो भेद हैं—१ क्षुल्लक व २ ऐलक। क्षुल्लकके पास एक चादर रहता है और ऐलकके पास लंगोट रहता है। क्षुल्लक बैठकर पात्रमें भोजन करते हैं और ऐलक बैठकर अपनी हाथकी अँगुलीमें रखकर भोजन करते हैं। ऐलक पिच्छी रखते और केशलोच करते हैं और क्षुल्लक नरम वस्त्रसे भूमिको शुद्ध करते हैं। आचार्यमहाराज, ऐलक और मुनिका व्रत ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यको देते हैं।

पहली प्रतिमासे छठी प्रतिमातक जघन्यश्रावक, सातवींसे नवमी तक मध्यम श्रावक और दसवीं तथा ग्यारहवीं प्रतिमाके धारक उत्तम श्रावक कहलाते हैं।

प्रश्न

१ प्रतिमा किसे कहते हैं?

२ प्रतिमायें कितनी होती हैं और उनमें क्या भेद है ?

३ प्रत्येक प्रतिमाका स्वरूप बताओ।

४ ऐलक और क्षुल्लक कौनसी प्रतिमा धारी होते हैं ? इनमें क्या अन्तर है ?

५ रात्रिभोजन त्यागका दूसरा नाम क्या है ?

६ ब्रह्मचर्य प्रतिमावाला सचित्तत्यागी होगा या नहीं ?

७ सामायिक करनेकी विधि क्या है ? उसमें क्या विचारना चाहिये और कितने समय तक करनी चाहिये ?

नवमा पाठ

प्रगति-गीत*

(श्रीमती हंसकुमारी तिवारी)

आगे चल, चल, आगे चल,
शंका भय सब त्यागे चल।
चल, आगे चल॥

बाधायें जो अड़ी खड़ी हों, मगमें, सारे अग जगमें।
कठिनाई बड़ी खड़ी हो, अवसाद भरा रग-रगमें॥
संकल्प हिमालयका हो, तू दृढ़ रह, भय ! आगे, चल।
चल, आगे चल॥ १॥

पग-पगमें प्राण हरा हो, उत्साह न म्लान जरा हो ।
हो लगन लगी आगे की, स्वरमें जय गान भरा हो ॥
काँटे हों, आग बिछी हो, हँसदे जीवन ! आगे चल ।
चल, आगे चल ॥ २ ॥
दे निष्ठा चरण निज अचल, मत तरुण चरण हो चचल ।
विस्मित हो विश्व विधाता, सृष्टि हो पल पल टल मल ॥
हृदमें हो गीत, अधर पर, मुस्कान कदम आगे चल ।
चल, आगे चल ॥ ३ ॥

दसवाँ पाठ

अहिंसा

(सिद्धान्तरत्न प० न हींरालाल जी शास्त्री)

धर्मका लक्षण अहिंसा है। भारतवर्षमें जितने मत प्रचलित हैं उन सबने अहिंसाधर्मको किसी न किसी रूपमें अवश्य स्वीकार किया है किन्तु जैनमतने अहिंसाका साङ्गोपाङ्ग विशद वर्णन कर उसे पूर्णरूपसे अपनाया है। अहिंसा क्या है, इसको समझनेके पहिले उसके प्रतिपक्षी हिंसाको निम्न प्रकार समझ लेना आवश्यक है। प्रमाद और कषायसे अपने व दूसरे जीवोंके प्राणोंका घात करना व दिलको दुखाना हिंसा है। जो *द्रव्यहिंसा* और *भावहिंसा*के भेदसे दो

तरह की है। किसी जीवको जानसे मार देना *द्रव्यहिंसा* है। जिस तरह हमको अपने प्राण प्यारे हैं उसी तरह संसारके सब जीवोंको अपने २ प्राण प्यारे हैं। इसलिये अपने प्राणोंके समान ही दूसरे जीवोंके प्राणोंको जानकर, कभी किसी जीवका घात नहीं करना *द्रव्यअहिंसा* है। गृहस्थ *संकल्पीहिंसाका* त्यागी होता है। गृहस्थको मन वचन कायसे किसी जीवको मारनेका इरादा नहीं करना चाहिये, नहीं तो उसे भारी पाप लगता है। जैसे धीवर, घरसे चलकर मार्गमें यह विचार करता है कि मैं आज तालावमेंसे खूब मछलियाँ मारूँगा। धीवर तालाव पर पहुँचकर बार २ जाल पानीमें डालता है किन्तु उसके जालमें सुबहसे शामतक एक भी मछली नहीं आती है। फिर भी धीवरको बहुत भारी हिंसाका पाप लगता है। क्योंकि वह पहिलेसे ही अनेक मछलियोंके मारनेका इरादा कर चुका है। इसीका नाम *संकल्पीहिंसा* है। गृहस्थको संकल्पीहिंसाके त्यागके साथ २ *विरोधी*, *उद्योगी* और *आरम्भीहिंसा* के बचावका भी पूर्णध्यान रखना चाहिये। शेर, सर्प, बिच्छू, ततइया आदि जीवोंके ऊपर भी अन्यजीवोंके समान दयाका भाव होना चाहिये। जो निर्दयी इन जीवोंको देखते ही इनको जानसे मार डालते हैं वे बड़ा भारी पाप करते हैं।

जिसका जो स्वभाव है वह उससे कभी नहीं जा सकता है। जैसे अग्निमें उष्णस्वभाव। अतः यह जानकर कि ततइया या बि[illegible] स्वभाव वैसा ही है, कभी उनका

ग्यारहवाँ पाठ

* अमर-नर

(ले०—श्री० सत्यभक्त)

विपदाओंको कुचल कुचल जो, कर्म मार्ग पर चलते हैं ।
बाधाओंको देख देख जो, मन्द मन्द मुसकाते हैं ॥१॥
जननी जन्मभूमि हित जो निज, जीवन पुष्प चढ़ाते हैं ।
इस जगमें वे ही नर अपना, नाम अमर कर जाते हैं ॥२॥
सुमन सदृश यश सौरभ उनका, इस जगमें छा जाता है ।
इतिहासोंमें, स्वर्णाक्षरमें, उनका नाम लिखाता है ॥३॥

* * * *

आओ मिटादें पाप जगके प्रेमकी पूजा करें ।
मिट जाँय हम मिट्टी बनें, पर विश्व की विपदा हरें ॥४॥

बारहवाँ पाठ

महावीर-स्वामी

(ले०—श्री० टी० एल० वस्वानी)

भगवान् महावीरकी स्मृतिके लिये चैतका महीना शुभ गिना जाता है। २५०० वर्ष पूर्व भगवान्ने इसी मासमें पटनाके पास अवतार धारण किया

---

* किशोरसे उद्धृत

कि पटना नगर अशोक और गुरु गोविन्द सिंह के कारण भी प्रसिद्ध है। इस मासमें शुक्लपक्षकी त्रयोदशीके दिन इनका जन्म हुआ था, यही इनके जन्म-उत्सवका पवित्र दिन है। भारतके नवयुवको! स्मरण रखो, तुमारी भारतमाताने अपनी गोदमें इस प्रकारके कई समर्थ महावीर वीरोंको जन्म दिया है। भारत गरीब है, परन्तु मानवी स्रोतका मूल कारण भारत, अमीर भी है। उसके लाखों पुत्र क्या नहीं कर सकते? अगर उनमें करनेकी कुछ इच्छा हो। क्या इसी भारतने युगयुगान्तरोंमें कितने ही ऐसे आध्यात्मिक पुरुष पैदा नहीं किये? आज जिस महावीरका उत्सव यह भारत मना रहा है केवल वही हमारे इतिहासका देदीप्यमान नक्षत्र नहीं है और भी कई महावीर पिछले युगोंसे भारतको अलङ्कृत कर चुके हैं। वे आध्यात्मिक शक्तियाँ—उन्होंने भी भारतभूमिको पवित्र किया है। उन्होंने भारतको अपनी शक्तियाँ देकर धनी और सम्पन्न भी बनाया है।

महावीरका शब्दार्थ '*अत्यंत वीर*' है। वही हमारे इतिहासकी अलौकिक शक्ति थे। वे वीर अहंकारी और हिंसक नहीं थे, किन्तु तप, प्रेम और स्वच्छताकी प्रतिमूर्ति थे।

रशियाके तपस्वी टाल्स्टायने एक जगह कहा है जिस प्रकार आग आगको नहीं बुझाती, इसी प्रकार पाप पापको शान्त नहीं कर सकते। इसी ऋषिकी शिक्षाका सूत्र कि बुराई मत बढाओ, हमें महात्मा ईसाकी वाणीमें मिलता है। किन्तु उनसे भी - - साल पहिले भारतके दो

भगवान् बुद्ध और भगवान् महावीरने इसी अहिंसाकी घोषणा की थी। जैनी लोग उसी अंतिम शक्ति महावीरको भगवान् कह कर पूजते हैं। वे उन्हें 'तीर्थंकर' के नामसे भी पूजते हैं। जिसको मैं 'पूर्ण' कहकर पुकारता हूँ। महावीर 'चौबीसवें' तीर्थंकर माने जाते हैं। पहले तीर्थंकरका नाम ऋषभनाथ या आदिनाथ है। जिन्होंने अयोध्यामें शरीर धारण किया था कैलाश पर्वत पर तप करके सिद्धि प्राप्त की। वे ही जैनधर्मके आदिप्रवर्तक थे। इन चौबीसवें तीर्थंकर भगवान् महावीरने बौद्धधर्मसे भी प्राचीन जैनधर्मका शंखनाद करते हुए उसको पुनः सञ्जीवित किया।

मुझे भगवान् महावीरने जिस कारण सबसे अधिक प्रभावित किया, वह उनकी एकान्त शान्ति और अद्भुत सौन्दर्य था। उनकी समकालीनता हमें भगवान् बुद्ध जैसा त्याग वैसे तप, वैसे विश्वप्रेमकी बारबार याद दिलाते हैं।

वे ईसासे पांच सौ निन्यानवें वर्ष पूर्व विहारके एक गांवमें हुए थे। उनके पिताका नाम सिद्धार्थ था। वे क्षत्रिय थे। उनकी माता रानी त्रिशला अथवा प्रियकारिणी थीं जो वज्जियाके प्रजातंत्रके अगुआ चेटककी पुत्री थीं। महावीर बाल्यकालमें शिक्षाके लिए पाठशालामें भेज गये थे। किन्तु अध्यापकोंने देखा कि बालक महावीरको अध्यापकोंकी आवश्यकता नहीं है। उनके भीतर अध्यापकोंने जिस विद्वत्ताको देखा उसे देख कर वे दंग रह गये। उन्होंने

समझा कि इस बालकको कोई शिक्षा नहीं दे सकता। भगवान् बुद्धकी तरह वे संसारसे वीतराग होनेकी प्रतीक्षामें थे। वे जैसे तैसे अट्ठाइस साल तक अपने परिवारमें रहे। इसी बीचमें उनके माता पिताका स्वर्गवास हो गया। उस समय उन्होंने संन्यास लेना ही उचित समझा।

संन्यासकी आज्ञा लेनेके लिये वे अपने बड़े भाईके पास पहुँचे, किन्तु उनके भाईने जवाब दिया ठहरो, अभी माता पिताके वियोगके घाव हरे हैं। इस तरह उन्होंने दो साल तक और प्रतीक्षा की। अब महात्मा ईसाकी तरह उनकी उम्र तीस सालकी थी। उन्होंने भगवान् बुद्धकी तरह संन्यास लेकर तप करनेका यही ठीक अवसर समझा। उन्होंने अपना धन गरीबोंमें बाँट दिया और भाईको राज्य सौंपकर एक दिन अपना परिवार छोड़कर वे संसारत्यागी हो गये। उनका समय तप और प्रार्थनामें बीतने लगा। भगवान् बुद्धको सिद्धि प्राप्त करनेमें छह साल लगे थे परन्तु महावीरने बारह वर्ष तक घोर तप किया तथा सिद्धि प्राप्त की। उन्होंने जृम्भक नगरके पास ऋजुकुला नदीके किनारे सिद्धि प्राप्त की और वे जैन धर्मके अनुसार तीर्थंकर और सर्वज्ञ हो गये। "कैवल्य" मिल गया। इसी पदवीको जैन ग्रन्थ 'केवलिन्' कहकर पुकारते हैं।

तब बुद्धके अनुसार वे भी उपदेश देनेको तत्पर हो गये। लगातार तीस सालतक उन्होंने जगह जगह उपदेश दिये।

बंगाल और बिहार उनके उपदेशके प्रधान स्थान थे। उन्होंने उन असभ्य जातियोंमें भी उपदेश दिया जिन्होंने उनके साथ दुर्व्यवहार किया। वे अपने धर्मके प्रचारार्थ श्रावस्ती और हिमालय भी गये। वे दुःखदर्द्रोंमें भी सदा शान्त हो रहे। जहाँ वे उपदेशक थे वहां शासक भी थे। उनके ग्यारह प्रमुख शिष्य थे। चार हजार साधुओंके सिवा बहु गृहस्थ भी उनके मतमें दीक्षित हुए। ब्राह्मण अब्राह्मण सभी उनके धर्ममें दीक्षित हुए। उन्हें जातिपाँतिका कोई ध्यान न था। और इससे ५२६ वर्ष पूर्व दिवालीके दिन उन्होंने ७२ सालकी उमरमें पावापुरी (बिहार) में अपना शरीर छोड़ दिया ? भगवान् महावीरका जीवन कितना सुन्दर था। धनी क्षत्रिय घरानेमें जन्म लेकर भी उन्होंने संसार त्याग दिया। उन्होंने अपना धन गरीबोंमें बाँट दिया और तप करने वनमें चले गये। मनुष्यके एक मुण्डने उनपर प्रहार भी किया, परन्तु वे शान्त थे।

वनसे तप करके लौटने पर उन्होंने अपने धर्मके उपदेश दिये। बहुतसे लोग उनपर हँसते थे। उनके उपदेशमें विघ्न डालते थे, परन्तु वे शान्त थे।

उनके एक शिष्यने उन्हें निर्वासित किया और उन्हें बदनाम किया परन्तु वे शान्त रहे। वे वस्तुत महावीर थे, उन्होंने अपनी शक्तिको शीलमय एवं बलवान् बनाया। वे शीलके अवतार थे। उनके जीवनमें उनके अनुयायियों

पर विशेष प्रभाव पडा। उन्होंने भगवान्का सन्देश दूर-दूर तक पहुँचा दिया। कहा जाता है कि ग्रीक दार्शनिक विद्वान् पीरोने जिमनोसोफिस्ट नामक विद्वान्से दर्शनोंका अभ्यास किया, जो जैन योगी थे।

बचपनमें वे 'वीर' नामसे पुकारे जाते थे। उनका नाम वर्धमान और सन्मति भी था। महावीर उनका पीछेका



विवरण कर्मके पाठमें देखें।

नाम है। यह उनका नाम इस तरह पडा कि एकबार वे अपने कुछ बालमित्रोंके साथ खेल रहे थे। उस समय एक बड़ा काला साँप कहींसे निकल आया और फन निकाल कर खड़ा हो गया। भगवान्ने एक दम जाकर उसके फन पर पैर रखकर उसे कमजोर किया।

मेरे लिये यह महात्मा एक दृष्टान्त है। क्योंकि भगवान्‌ने वस्तुतः सर्परूप विषयोंको कुचल डाला था। वे वस्तुतः बड़े वीर और इन्द्रियजयी थे। उन्होंने रागद्वेष पर विजय पाई। उनके जीवनका लक्ष्य जीवरक्षा, ब्रह्मचर्य था। जो सबसे बड़ा शक्तिमय उपाय है। वर्तमान भारत को ऐसे ही महापुरुषों, महात्माओंकी आवश्यकता है। धन और साधारण ज्ञान कुछ भी लाभ नहीं दे सकता। इस समय भी ऐसे ही महापुरुषकी आवश्यकता है जो मनुष्यत्वकी रक्षा कर सके, जो निर्भीक होकर स्वतंत्रताके लिये तत्पर हो सके। भगवान् महावीरका चरित्र उनके जीवनसे, उनका सिद्धान्त स्पष्ट झलकती है। जैसे उनका आचार सात्विक और आत्मसंयमका जीवन था वैसे ही उनकी शिक्षा थी। उनकी इस शिक्षासे कि—"तमाम प्राणियोंको अपना जैसा समझो और किसीको मत सताओ।" स्पष्ट रूपसे दो बातें हैं एक विधि और दूसरा निषेध विधि है एकताकी शिक्षा, और निषेध है किसीको न सताना। तमाम प्राणियोंको अपने जैसे समझनेसे ही दूसरा भाव स्पष्ट हो जाता है।

भगवान् महावीरके जीवन और शिक्षासे तीन बातें मालूम होती हैं—

(१) ब्रह्मचर्य (२) अनेकान्त वाद और स्याद्वाद। भगवान्‌ने बतलाया है कि एक अंशसे संसारकी सम्पूर्ण सच्चाई प्रतीत नहीं हो सकती। क्योंकि सत्य अनन्त है। मुझे

इस सम्बन्धमें एक प्रसिद्ध दार्शनिक आइन्स्टाइन (Einstein) का 'सम्बन्धवाद' (Doctrine of relativity) याद आ रहा है। इस लोगोंने सिद्धान्तके नामपर पिछले दिनों बहुत कुछ दुःख उठाया है। इस समय आवश्यकता इस बात की है कि देशके नवयुवक, भगवान् महावीरके इस उपदेशको लेकर सुदूर ग्रामों और नगरोंमें पारस्परिक सहानुभूति और प्रेमका प्रचार करें। सिद्धान्तोंने हमेशा हममें लड़ाई झगड़े और विभाग पैदा किये हैं और हम लोग आध्यात्मिक जीवनके लिये नये विचारको लेकर देशमें स्वदेशप्रेम की लहर पैदा कर दें। एक नई राष्ट्रीयताको जागृत कर दें। क्योंकि सत्य अनन्त है। धर्मका आशय भी लड़ाई झगड़े पैदा करना नहीं बल्कि मनुष्यता और प्रेम पैदा करना है।

(३) अहिंसा —

इसका मतलब निकम्मापन और कायरता हरगिज नहीं है। वस्तुतः यह सबसे बड़ा गुण है, सबसे बड़ी शक्ति और सबसे बड़ा बल। यह शान्तिका बल है जो लड़ाकुओंके हृदयमें भी शान्ति पैदा करता है।

योरोपके लोगोंने बहुत समय तक हिंसाको अपनाया, और हिन्दुस्तानके लोगोंमें भी कुछ कुछ यही भावना दिखाई देती है। एक फ्रांसीसीने अपनी एक बिलकुल नई किताबमें लिखा है कि "हम जर्मनीका नाश चाहते हैं।" इसी प्रकार एक ... ...याके दानफण्डमें सहायता ...

प्रार्थना की गई तो उसने कहा कि, मैं सम्पूर्ण योरोपका नाश देखना चाहता हूँ, लेकिन यह बात मुझे बड़ा दुख देती है। मुझे ऐसे समयमें भारतके उन ऋषियोंकी याद आती है और विश्वेश्वर भगवान् महावीरकी, जिन्होंने पचीस सौ वर्ष पूर्व एक महान् संदेश दिया था कि 'अपने आपको भूलकर विश्वपर विजय पाओ।'

मुझे इतिहासके पन्नोंमें बर्बादी, युद्ध, धार्मिक अत्याचार अब भी मालूम होते हैं, उनमें किसीको भी सफलता नहीं मिली। बल और घमण्ड सदासे हमारी उन्नतिके रास्तेमें खिलाते रहे हैं। हमने अहिंसाको अपने जीवनमें कभी नहीं अपनाया। क्या हमारे भोजन, हमारे व्यापार और हमारे सामाजिक जीवनमें अहिंसाके बजाय हिंसाका ही अधिक भाग नहीं है? आजकल की हमारी राजनीतिमें क्या है? नियमोंसे मिलता?

मैं एक बात बहुत ही दृढ़तासे देख रहा हूँ कि हमारे राष्ट्रीय आन्दोलनका, मनुष्य बनाने वाली आत्मिक शक्तियोंसे सम्बंध होना चाहिये। और हिंसाका नाम भी शेष न रहे। हमें भाईचारेकी सभ्यताका निर्माण करना होगा। घृणा हमें सहायता दे नहीं सकती। आज जातियाँ घावों व दुखसे युक्त होनेमें पड़ रही हैं। हमें अपने राष्ट्रीय जीवनमें ईश्वरको अपने पास बुलाना होगा। इसी आध्यात्मिक शक्तिके आधारपर हम मनुष्यत्वका पुनर्निर्माण कर सकेंगे। अगर

मुझसे पूछा जाय कि भारतकी आत्मा क्या है? तो मैं एक शब्दमें कहूँगा कि यह अहिंसा है। भारतकी सनातन खोज अहिंसाकी तलाशमें ही थी। जिसने, मन, वचन और कर्मने हमारे जीवनमें प्रवेश किया। भारतीय अहिंसाके सिद्धान्तने सम्पूर्ण विश्वको अपनी ओर आकृष्ट किया है। उसने औपनिवेशिक राज्यो और विजयोके स्वप्न कभी नहीं देखे। यह दूसरोको अजनबी समझने वाले ईर्ष्यालु चीन और जापानका भी गुरु हो चुका है। भारतका राष्ट्र कभी युद्ध प्रिय न बना। उसके मनुष्यत्वके प्रति, प्रेमने उसे सदा ही साम्राज्य लिप्सासे बचाया है। यह एक बहुत बड़ी राजनैतिक सचाई थी, जिसपर हमारा ध्यान भगवान् बुद्धने आकृष्ट किया है। "विजयी और विजित सदा ही दुःखी रहते है," विजित इसलिये कि उनपर अत्याचार हुये और जीवन वाले इसलिये डरते है कि विजित जातियाँ फिर उठकर उनके विजय घोषको भस्मसात् न करदें। भारतने कभी दूसरे देशोको गुलाम नहीं बनाया। दूसरोको दास बनाना बड़ी भारी हिंसा है।

योरोप सदा ही मारकाटके पीछे दौड़ता रहा है। और उसकी संस्कृतिका बल सदासे ही इसे स्वतन्त्रताको उपयोगी समझना रहा है। परन्तु याद रहे—साधनाके बिना स्वतन्त्रता नहीं मिलती। और बिना नैतिक संरक्षणके भी योरोप राज्य और राष्ट्रके अतिरिक्त किसी नियमको नहीं मानता शायद [illegible] मची है। यही पश्चिमी

संस्कृति है। और इसीलिये ससारव्यापी विश्वयुद्ध हैं। जो अभीतक समाप्त नहीं होते। भारतीय नवयुवक भी अहिंसाको सन्देहकी दृष्टिसे देखते हैं। वे स्वभावत इस अपमानजनक अवस्थाको घूर कर देख रहे हैं। जिसमें, किसी शक्ति शाली और नशीले राज्यने उनके अपमानमें वृद्धि की है। लेकिन स्वतन्त्रताके लिये युद्धका छिपा हुआ रहस्य आत्मत्याग, सन्तोपका नियमन है। मेरा तो विश्वास है कि अहिंसा कमजोरी नहीं है। सच्ची अहिंसामें मृत्युका भी भय नहीं, किन्तु मनुष्यताके लिये आदर है। मेरा तो पूर्ण विश्वास है जैसा शास्त्र कहते हैं—"अहिंसा यश है, त्याग है, जीवनकी विविध धाराओंमें सबसे बड़ी शक्ति है।"

भगवान् महावीरकी बहुतसी सूक्तियोंमें एक यह भी है कि "तुम ही अपने मित्र हो।" हां, और तुम ही अपने शत्रु हो। तुम अपने मित्र बनो। शत्रु मत बनो। हम सब लोग आनन्दकी खोजमें हैं। दूसरोंको भी सुखी होने दो। यह नियम है जो दूसरोंको सुखी करता है वह स्वयं सुखी होता है। जो दूसरोंको हानि पहुँचाता है उसको स्वयं हानि होती है। इसलिये अपने प्रतिदिनके जीवनमें अहिंसाका व्रत करो और संसारमें प्रेमके प्रकाशको फैलाओ।

तेरहवाँ पाठ

तीन लोकका वर्णन

(लें०—सिद्धान्तमहोदधि प० माणिकचन्द्रजी न्यायाचार्य)

इस चराचर जगतमें सबसे बड़ा पदार्थ अलोकाकाश है, जो कि पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ऊर्ध्व, अध, इन छहो दिशाओंमें अनन्तानन्त राजू फैला हुआ वर्फीके समान घन शरीर है, आकाशको हम इन्द्रियोंसे नहीं जान सकते हैं। हाँ सर्वज्ञद्वारा कहे गये आगम या युक्तियोंसे अतीन्द्रिय पदार्थोंका परिज्ञान कर लिया जाता है। उस सब ओर आकार आकाशके ठीक बीचमें अलोकाकाश है, जो कि अनादिकालसे अनन्तकालतक अकृत्रिम है। किसीके द्वारा बनाया गया नहीं है और न किसी समयमें लोककी सृष्टि होती है और न प्रलय ही होता है। अतः जीव और अजीव पदार्थोंसे ठसाठस भरा हुआ यह लोक अनादि निधन है।

जीव, पुद्गल, धर्म, अधर्म आकाश, और काल इन छह द्रव्योंके समुदायको लोक कहते हैं। इस लोकसे घिरे हुये मध्यवर्ती आकाशको लोकाकाश कहते हैं।

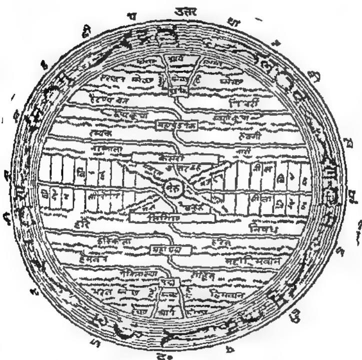
यह लोक पूर्व पश्चिम, दिशामें नीचे सात राजू है, क्रमसे घटता हुआ ऊपर आकर एक राजू चौड़ा रह गया है। और क्रमसे बढता हुआ साढ़ेदश राजू ऊपर जाकर, पाँच राजू चौड़ा हो गया है, पुनः चौदह राजू ऊपर क्रमसे घटता हुआ [illegible] राजू रह गया है।

लम्बाई, दक्षिण और उत्तर सब जगह सात राजू है, सब; तीन सौ तेतालीस घनराजू प्रमाण यह लोक है, लोकके ठीक; बीचमें एक राजू चौडी, एक राजू लम्बी और चौदह राजू; ऊँची त्रसनाली पडी हुई है।

यह लोक साठ हजार योजन मोटे तीन वातवलयो (हवाओ) पर डटा हुआ है।

अधोलोक, मध्यलोक, और उर्ध्वलोक ये तीन भेद लोकाकाशके किये गये हैं। लोकके ठीक बीचमें एक लाख चालीस योजन ऊँचा सुदर्शन मेरु नामका, पर्वत अनादि कालसे प्रतिष्ठित है, इस पर्वतके नीचेके सात राजू भागको अधोलोक कहते हैं। और कुछ कम सात राजू इससे ऊपर ऊर्ध्वलोक समझा जाता है तथा मेरु बराबर ऊँचा, नीचा, और तिरछा असंख्यात योजनों लम्बा मध्यलोक है। अधोलोकमें सबसे नीचे एक राजूतक बादर निगोद जीव भरे हुए हैं और उससे ऊपर छह राजुओंमें सात पृथ्वियाँ हैं, जिनमें पापकर्मोंके फलको भोगनेवाले असंख्यात नारकी जीव दु:खयातनाओंको सह रहे हैं। पाँच स्थावरकायिक जीव, लोकमें सर्वत्र पाये जाते हैं। जिस मध्यलोकमें हम लोग ठहरे हुये हैं उसका ठीक आकार लम्बे फाटक तख्तेके समान है अर्थात् सात राजू लम्बा एक राजू चौडा और एक लाख चालीस हजार योजन ऊंचा यह मध्यलोक है। जिस रत्नप्रभा पृथ्वीपर हम रहते हैं वह सात राजू लम्बी, एक राजू चौडी, एक लाख अस्सी हजार योजन मोटी है।

यदि हम इसमें की त्रसनाली का ही नक्शा खींचें तो वह एक राजू लम्बा चौड़ा, ठीक चौकोर बनेगा। फिर यदि हम अपने ठहरनेके द्वीपमात्रका चित्र खींचें तो वह



एक हजार योजन मोटा और एक लाख योजन लम्बा, चौड़ा थाली के समान बनेगा।

मध्यलोक में जम्बूद्वीप, लवण समुद्र आदिक असंख्यात द्वीप समुद्र हैं।

सबके बीचमें जम्बूद्वीप है, जो कि एक लाख योजन। लम्बा चौड़ा गोल है, नील पर्वत के निकट उत्तर कुरु में एक रत्नमय जामुन का वृक्ष है, इस कारण इस द्वीप का नाम जम्बूद्वीप अनादि काल से चलता आरहा है।

जम्बूद्वीप में हिमवान्, महाहिमवान् निषध, नील, रुक्मी और शिखरी ये छह पर्वत पूर्व पश्चिम की ओर लम्बे पड़े हुए हैं, जिनसे जम्बूद्वीपके सात खण्ड हो जाते हैं। उन्हीं सात खण्डों की भरत, हैमवत, हरि, विदेह, रम्यक हैरण्यवत और ऐरावत, इन सात क्षेत्ररूप रचना हो रही है।

दक्षिण दिशा की ओर जिस भरत में हम और आप रहते हैं उसकी आकृति धनुषकी सी है। भरतक्षेत्रके ठीक बीच में पचास योजन चौड़ा पचीस योजन ऊँचा और पूर्व पश्चिम कुछ अधिक दस हजार योजन लम्बा विजयार्ध पर्वत पहाड़ हुआ है।

भरत से जुपटा हुआ १०५२ दस सौ बावन योजन चौड़ा कुछ अधिक चौबीस हजार योजन लम्बा तथा सौ योजन ऊँचा हिमवान् पर्वत है। हिमवान् पर्वत के ऊपर एक हजार योजन लम्बा, पाँच सौ योजन चौड़ा, दश योजन गहरा पद्म नामका सरोवर है।

उसमें से (महा) गङ्गा और (महा) सिन्धु नाम की नदियां निकलती हैं। आज कल पञ्जाब में बहनेवाली तथा बहने वाली क्षुद्र गङ्गा और सिन्धुओं से ये नदियाँ न्यारी हैं। दोनों नदियां उत्तर भरतक्षेत्र में बहती हैं, विजयार्ध पर्वत की

गुफाओं में से निकल कर दक्षिण भरत में बह कर लवण-समुद्र में मिल जाती हैं।

इस प्रकार से भरतक्षेत्र के छह खण्ड हो जाते हैं। छह खण्डो के अधिपति को चक्रवर्ती कहते हैं। इन छह खण्डो में लवण समुद्र की ओर के खण्ड को आर्य खण्ड कहते हैं। हमलोग आर्य खण्ड में निवास करते हैं। आजकल देखे जा रहे यूरोप, अमरीका आदि देश सब इस आर्य खण्ड के भीतर ही हैं। शेष पाँच खण्ड म्लेच्छ खण्ड कहे जाते हैं।

जम्बूद्वीपके ठीक बीच में एक लाख चालीस हजार योजन ऊँचा और भूमि में दश हजार योजन चौडा क्रम से घटता हुआ ऊपर एक हजार योजन चौडा सुमेरु पर्वत है।

इस पर्वतके ऊपर पाण्डुक वनमें तीर्थंङ्करका जन्माभिषेक उत्सव मनाया जाता है। जम्बूद्वीपके चारो ओर दो लाख योजन चौडा लवण समुद्र फैला हुआ है। लवण समुद्रके चारो तरफ चार लाख योजन चौडा धातकी खण्डद्वीप है। इस द्वीपमें पूर्व पश्चिम दिशामें दो मेरुपर्वत हैं। जम्बूद्वीपसे दूनी रचना है। धातकीखण्डको सब ओर घेरकर आठ लाख योजन चौडा कालोदधि समुद्र व्यवस्थित है। इसको चारो ओर घेरे हुये सोलह लाख योजन चौडा पुष्कर द्वीप है। इसके ठीक बीचमें मानुषोत्तर पर्वत पडा हुआ है, मनुष्य इसके बाहर नहीं जा सकते हैं। इस कारण इसकी मानुषोत्तर संज्ञा है। मानुषोत्तरके पहिले आठ लाख

योजन चौडे पुष्करार्धद्वीपमें दो मेरु हैं। मेरुओंके दोनो ओर क्षेत्र और पर्वतोंमें जम्बूद्वीपकीसी रचना है। इन ढाई द्वीपोंमें पांच भरत, पांच ऐरावत, और पांच विदेह इस तरह पंद्रह कर्मभूमियाँ हैं। यहींसे मनुष्य संयमको धारणकर मुक्ति लाभ करते हैं। शेष स्थानोंपर भोग भूमियाँ हैं।

ढाईद्वीपसे आगे असंख्यात द्वीप समुद्रोंमें व्यंतरदेव और तिर्यञ्चजीव निवास करते हैं। हाँ अन्तिम आधे द्वीप और पूरे समुद्र तथा चारों कोनोंमें कर्मभूमिकी रचना है।

यहाँ समतल पृथ्वीसे सात सौ नव्वे योजन चलकर तारे हैं। तारासे दश योजन चलकर सूर्य हैं। सूर्यसे अस्सी योजन ऊपर चन्द्रविमान चलते हैं। इस प्रकार एक सौ दश योजन मोटे और असंख्यात योजन लम्बे चौडे आकाशमें यह ज्योतिष्क मंडल है। ढाई द्वीपमें ये सुदर्शन मेरुकी प्रदक्षिणा करते रहते हैं। इनके बाहर जहाँके तहाँ स्थित हैं। दिखे जाने वाले सूर्य, चन्द्रमा और तारे ये सब विमान हैं। इनके ऊपर महल बने हुये हैं, उन एक एकमें सैकड़ों हजारों, ज्योतिष्क देव निवास करते हैं। सूर्य या चन्द्रविमान अनेक हैं। जम्बूद्वीपमें दो सूर्य और दो चन्द्रमा हैं। आजका सूर्य कल विदेह क्षेत्रमें घूमता हुआ परसों पुनः यहाँ आकर प्रकाश करेगा। सुदर्शनमेरुके ऊपर कुछ कम सात राजूतक ऊर्ध्वलोक है। यहाँ वैमानिक देव निवास करते हैं ऊर्ध्वलोकमें सबसे ऊँचे *तनुवात-वलयके* अन्तमें

विरोध उपस्थित हो जाता है। जैसे—एक मनुष्य अपने पिताको पिता कहता है। यहाँ पिता कहलानेवाला सभीका पिता नहीं कहा जा सकता, क्योंकि वह किसीका लड़का है, किसीका भानजा है, किसीका मामा है, किसीका काका है, किसीका नाती है, किसीका बाबा है और किसीका कुछ है। वह अपने लड़केकी अपेक्षा पिता अवश्य है। पिताकी अपेक्षा लड़का है, मामाकी अपेक्षा भानजा है। इसी प्रकार सब समझना चाहिये।

ऐसे ही ४ फुटका बेंत छोटा है या बड़ा? अगर ५-७ फुटका बेंत सामने हो तो उनसे छोटा है और २-३ फुटवाला बेंत हो तो वह चार फुटवाला इससे बड़ा है। इस तरह ४ फुटका बेंत छोटा भी है और बड़ा भी है।

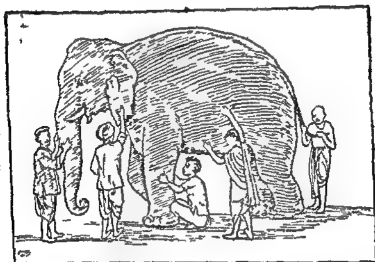
ठीक इसी तरह कोई पदार्थ किसी अपेक्षासे है' और किसी अपेक्षासे 'नहीं' है। दोनों धर्म एक साथ रहते हैं। इनमें अन्धकार और प्रकाशके समान कोई विरोध नहीं है। एक पदार्थमें अनेक धर्म रहते हैं।

पदार्थके एक अंशको जानना *नय* अथवा *एकांत* है और पदार्थके सब अंशोंको जानना *प्रमाण* अथवा *अनेकान्त* है। इसे ही उदाहरण द्वारा स्पष्ट करते हैं —

अन्धे पाँच खरे इक ठौर। आगे गज इक आयो दौर।
एक एक अंग सबने गहा। सो सरधान जीव में लहा॥

सूँडि पकरि गज मूसल होय । छाज कानतें माने कोय ।
माना थभ पकरि गज अग । पेट पकरि चौतरा अभंग ॥
पूँछ पकरि लाठी सरदहा । पाँचों ने गज भेद न लहा ।
झगरैं लरैं करैं बहु रार । समझाए सन देखनहार ॥

—कविवर द्यानतराय



अर्थ यह है कि पाँच अन्धोने हाथीका एक २ अङ्ग पकड कर हाथीको मूसल, सूप, खम्भा, चबूतरा और लाठीके समान समझ लिया और आपसमें लडने लगे। इतनेमें आँख वाला एक आदमी आया और उनके आपसमें लडने झगडनेका कारण समझ कर बाला कि सुनो, जिसने सूँड पकडी है, वह हाथीके कान, पेट, पाँव और पूँछ पकड कर

देखे और जिसने कान पकडा है वह सूँड, पेट, पाँव और पूँछ पकडे। इस तरह पाँचोंने जब पाँचों अङ्ग पकड लिये तब उन्हें आपसमें झगड़नेका बडा दुःख हुवा और फिर मालूम हुवा कि हम पाँचों ठीक कहते थे लेकिन और चारोंकी भी बात ठीक थी। एक दूसरे की बात न सुननेसे ही झगडा हुवा।

इसी प्रकार जैनसिद्धान्त पदार्थमें अनेक धर्म्मोंको मानता है। इसे ही स्याद्वाद कहते हैं।

इस स्याद्वाद सिद्धान्तपर संसारकेसमस्त निष्पक्ष विद्वान् मोहित हैं।

प्रश्न

१ स्याद्वादका क्या अर्थ है ?
२ स्याद्वादसे क्या लाभ है ?
३ स्याद्वादको दो तीन उदाहरण देकर समझाओ।

पन्द्रहवाँ पाठ

कर्म (अ)

चार घातिया कर्म

संसारमें प्राणीमात्र सुखकी खोजमें रहता है। कोई भी नहीं चाहता है कि मुझे किसी प्रकारका कष्ट हो। कोई ज्ञानी है, कोई मूर्ख है। कोई सुखी है, कोई दुखी है। कोई चरित्रवान् है, कोई भ्रष्ट है। कोई मनुष्य है, कोई

पशु है। कोइ सुडौल है, कोई काना कूबडा है। कोई धनी है, कोइ दरिद्री है और कोई राजा है, कोई महतर है।

जब एक कक्षामें २५ विद्यार्थी पढ़ते हैं तो उनमें कोई विद्यार्थी एक दो वार समझाने पर कोई पाठ अच्छी तरह समझ लेता है और किसीको कई वार समझाने पर भी समझमें नहीं आता। एक तो अच्छे नम्बरोंमें पास हो जाता है और एक पास नहीं हो पाता। सब बराबर पढते हैं, परिश्रम करते हैं फिर भी ज्ञान प्राप्त नहीं हो पाना कर्मके आधीन है। इसी प्रकार एक मजदूर १६ घण्टे परिश्रम कर चार आना रोज भी नहीं कमा पाता और एक कुर्सीपर कुछ घटे बैठे बैठे १००) २००) रु० महीना पैदा कर लेता है। यह भी कर्मके आधीन है। इसलिये कर्म्म किसे कहते हैं और उसके मुख्य भेद कितने हैं? यह सरलतासे यहाँ समझाते हैं।*

कर्म्म—जो पुद्गल, आत्माके मूल स्वभावको प्रकट नहीं होने देता है उसे कर्म्म कहते हैं। जिस प्रकार बादलोंके कारण सूर्यका प्रकाश रुक जाता है उसी प्रकार क्रोध आदि कषायोंके कारण, लोकाकाशमें फैले हुय पुद्गल परमाणु आत्माका स्वभाव ढाक लेते हैं। इन्हीं पुद्गल परमाणुओंको कर्म कहते हैं। इन पुद्गल परमाणुओंमें कषायोंके सम्बन्धसे सुख और दुःख देनेकी शक्ति हो जाती है। ये कर्म्म आठ प्रकारके होते हैं



*कर्म्माद्य[illegible] [illegible]सूत्र' आदि ग्रन्थोंसे प्राप्त करना चाहिये।

१ ज्ञानावरण, २ दर्शनावरण, ३ वेदनीय, ४ मोहनीय, ५ आयु, ६ नाम, ७ गोत्र और ८ अंतराय।

इनमें ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय ये चार घातियाकर्म होते हैं। और वेदनीय, आयु, नाम और गोत्र ये चार कर्म अघातिया होते हैं।

१ *ज्ञानावरण कर्म*—जो आत्माके ज्ञान गुणको प्रगट न होने दे। इस कर्मके उदयसे प्रयत्न करने पर भी ज्ञान प्राप्त नहीं होता।

दूसरेके पढ़नेमें बाधा डालना, किसीकी पुस्तक फाड़देना, छिपा देना, किसीको पुस्तक न दिखाना, अपने गुरु अथवा किसी विद्वान् गृहस्थकी निन्दा करना, अपने ज्ञानका गर्व करना, पढ़नेमें आलस करना, सच्चे उपदेशमें दोष लगाना, दूसरोंको सत्य उपदेश देने और सुननेसे रोकना, और यह पढ़कर मेरे बराबर हो जावेगा, इस भावसे नहीं पढ़ाना इत्यादि कार्योंसे ज्ञानावरण कर्मका बन्ध होता है। जैसे जैसे ज्ञानावरण कर्म दूर होता जावेगा वैसे वैसे ज्ञान चमकता जावेगा।

२ *दर्शनावरण कर्म*—जो आत्माके दर्शन गुणको प्रगट न होने दे। जैसे एक राजाका पहरेदार (चौकीदार) पहरे पर बैठा हुआ है, वह किसीको भी भीतर जाकर राजाके दर्शन नहीं करने देता। इसी प्रकार दर्शनावरण कर्म आत्मामें दर्शन गुण नहीं प्रगट होने देता। जैसे भगवानदास भगवानके दर्शन करने गये लेकिन मन्दिरका

ताला लगा पाया। इससे भगवानदासको दर्शनावरण कर्मका उदय समझना चाहिये। किसीको देखने न देना, देखी हुई वस्तु दूसरेको न दिखाना, अपनी दृष्टिका अभिमान करना, दिनमें सोना, मत्सर वुद्धिसे अपने पासकी चीज नहीं दिखाना, किसीकी आँख फोड़ना और किसीका चश्मा फोड़ देना इत्यादि कार्योंसे दर्शनावरण कर्मका बन्ध होता है। इसीलिये आत्माका दर्शन गुण प्रकट नहीं होने पाता।

४ *मोहनीय कर्म*—जो आत्मा के सम्यक्त्व और चारित्र गुण को घाते। इस कर्म के उदय से जीव अपना स्वरूप भूलकर दूसरों के पदार्थ अपने समझने लगता है। जैसे शराब पीने वाले को अपने भले या बुरे का ज्ञान नहीं होता वैसे ही मोहनीय कर्म से जीव को अपनी भलाई या बुराई का कुछ भी ज्ञान नहीं होता है।

क्रोध, मान, माया, लोभ, राग और द्वेष ये सब मोहनीय कर्म के उदय से होते हैं। वीरेन्द्र ने क्रोध में आकर किसी को पीट दिया और रमेशचन्द्र ने लोभ में आकर किसी के रुपये चुरा लिये। दोनो को मोहनीय कर्म का उदय समझना चाहिये।

सच्चे देव, शास्त्र और गुरुपर दोष लगाना, मिथ्या देव, शास्त्र और गुरुओंकी पूजा वगैरह करना, पाँचो इन्द्रियोंके विषयोंमें आनन्द मानना आदिसे मोहनीय कर्म्मका बन्ध होता है।

यह कर्म दो प्रकारका है :—दर्शनमोहनीय और चारित्र-मोहनीय।

दर्शनमोहनीयकर्मसे आत्माके सम्यक्त्व गुणका घात होता है। इससे यथार्थ तत्वोंपर श्रद्धा नहीं हो पाती। इसे ही दर्शनमोहनीय कहते हैं।



चरित्रमोहनीयकर्मसे आत्माके चरित्रगुणका घात होता है। इसके उदयसे जीव, श्रावक और मुनिका चारित्र नहीं धारण कर सकता, क्रोध आदि कषायोंमें फँसा रहता है।

दर्शनमोहनीय कर्मके मिथ्यात्व सम्यङ्मिथ्यात्व और सम्यक्प्रकृति ये तीन और चारित्रमोहनीय कर्मके ६ कषाय और १६ कषाय इस प्रकार सब २८ भेद मोहनीयकर्मके होते हैं।

मोहनीयकर्म बडा बलवान् होता है। इसपर विजय प्राप्त करना प्रत्येक जीवका कर्त्तव्य है। जो इसे जीत ले वही सच्चा वीर कहलाता है।

८ अंतराय कर्म—के उदयसे किसी जीवके कार्यमें अंतराय (विघ्न) आ जाता है।

जैसे एक भिखारी, राजासे भीख मांगता है और मुनीम या खजानची उसे न देनेके लिये बहानाबाजी करने लगे, जिससे राजाकी आज्ञा मिलनेपर भी भिखारीको भीख (अन्न, वस्त्र रुपया आदि) नहीं मिल सकी। यहाँ मुनीम भिखारी की भीखमें विघ्न रूप हो गये। ऐसे ही कोई बालक आम या पूरी वगैरह खाता हो और चील या कौवा छुड़ा ले जावे तो समझना चाहिये कि उसके अन्तराय कर्मका उदय है।

अन्तरायके पाँच भेद होते हैं—दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य।

इनके उदयसे कोई जीव दान [आहार, ज्ञान, (उपकरण) औषधि और अभय (वसतिका)] नहीं कर पाता, अपनी इच्छित वस्तु प्राप्त नहीं कर सकता, उत्तम पदार्थोंका भोग और उपभोग नहीं कर सकता और अपने शरीरमें सामर्थ्य (बल) नहीं प्राप्त कर सकता।

इसलिये किसीके दान करते, किसीको पढ़ते, रुपया या नोकरी चाकरीका लाभ होते, धर्म करते, दूसरोंको भोग (बार २ काममें आने योग्य वस्त्र, सवारी आदि) प्राप्त करते अथवा उपभोग (भोजन आदि एकबार काममें आने योग्य)

पदार्थोंके मिलते समय अपने आपको विघ्न अथवा अन्तराय रूप नहीं होना चाहिये। नहीं तो अन्तराय कर्मका बन्ध होता है।

सोलहवाँ पाठ

जैनधर्म और विज्ञान

(ले०—पं० सुमेरचन्द्रजी दिवाकर, न्यायतीर्थ, बी० ए०, एल० एल० बी०)

आजकल दुनियामें विज्ञानका नाम बहुत सुना जाता है। उसने ही धर्मके नामपर प्रचलित बहुतसे ढोंगोंकी कलई खोली है। इस कारण अनेक धर्म यह घोषित करते हैं, कि धर्म और विज्ञानमें जबरदस्त विरोध है। जैनधर्म वस्तु स्वभाव रूप है इससे वह विज्ञानकी खोजोंका स्वागत करता है, क्योंकि सर्वज्ञ वीतराग और हितोपदेशी जिनेन्द्र भगवान्के द्वारा निरूपण किये गये तत्वोंमें ऐसी बात नहीं है, जिसके विरोधमें विज्ञानकी आवाज उठ सके।

यद्यपि विज्ञानने अभी पूर्णता प्राप्त नहीं की है, फिर भी उसकी खोजोंने जैनाचार्योंके कथनकी अनेक विषयोंमें प्रामाणिकता प्रकट की है। भारतवर्षके बहुतसे दार्शनिक शब्द (Sound) को आकाशका गुण बताते थे और उसे अमूर्तिक बताकर अनेक युक्तियोंका जाल फैलाया करते थे, किन्तु जैनधर्माचार्योंने शब्दको जड़ तथा मूर्तिमान् बताया

था, आज विज्ञानने ग्रामोफोन, (Gramophone) रेडियो (Radio) आदि ध्वनिसम्बन्धी यन्त्रोंके आधारपर उस शब्दको जैनधर्मके समान प्रत्यक्ष सिद्ध कर दिया।

न्याय और वैशेषिक सिद्धान्तकार पृथ्वी, जल, वायु आदिको स्वतन्त्र तत्व बताते हैं किन्तु जैनाचार्योंने एक पुद्गल नामका तत्व बताकर इनको उसकी अवस्था विशेष बताया है। विज्ञानने हाइड्रोजिन आक्सीजन (hydrogen oxygen) नामक वायुओंका उचित मात्रामें मेलकर जल बनाया, और जलका पृथक्करण करके उपरोक्त हवाओंको स्पष्ट कर दिया। इसीप्रकार पृथ्वी पर्यायधारी अनेक पदार्थोंको जल और वायु रूप अवस्थामें पहुँचाकर यह बता दिया कि वास्तवमें स्वतन्त्र तत्व नहीं हैं किन्तु पुद्गल (matter) की विशेष अवस्थाएँ हैं।

आज हजारों मील दूरीसे शब्दोंको हमारे पासतक पहुँचानेमें मध्यम (medium) रूपसे 'ईथर' नामके अदृश्य तत्वकी वैज्ञानिकोंको कल्पना करनी पड़ी, किन्तु जैनाचार्यों ने हजारों वर्ष पूर्वसे ही लोकव्यापी 'महास्कन्ध' नामक एक पदार्थके अस्तित्वको बताया है। इसकी सहायतासे ही भगवान् जिनेन्द्रके जन्मादिकी वार्ता क्षणभरमें समस्त जगत्में फैल जाती थी। प्रतीत तो ऐसा भी होता है कि नेत्रकम्प, बाहुस्पन्दन आदिके द्वारा इष्ट अनिष्ट घटनाओंके सदेश स्वतः पहुँचानेमें यही महास्कन्ध सहायता प्रदान करता है। यह व्यापक होते हुये भी सूक्ष्म बताया गया *

जैनधर्ममें पानी छानकर पीनेकी आज्ञा है, क्योंकि इससे जलके जीवोंकी प्राण विराधना (हिंसा) नहीं होने पाती। आजक अणुवीक्षणयंत्र (microscope) ने यह प्रत्यक्ष दिखा दिया कि जलमें चलते फिरते छोटे २ बहुतसे जीव पाए जाते हैं। कितनी विचित्र बात है कि जिन जीवोंका पता हम अनेक यंत्रोंकी सहायतासे कठिनतापूर्वक प्राप्त करते हैं,



विरण कर्मके पाठमें देखें

उनको हमारे आचार्य अपने अतीन्द्रिय ज्ञानके द्वारा बिना अवलम्बनके जानते थे।

अहिंसाव्रतकी रक्षाके लिये जैनधर्ममें रात्रिभोजन त्यागकी शिक्षा दी गई है। वर्तमान विज्ञान भी यह बताता है कि सूर्यास्त होनेके बाद बहुतसे सूक्ष्म जीव उत्पन्न

होकर विचरण करने लगते हैं, अत दिनका भोजन करना बेहतर है। इस विषयका समर्थन वैद्यक ग्रन्थ भी करते हैं।

जैनधर्ममें बताया गया है कि वनस्पतिमें प्राण हैं। इसके विषयमें जैनाचार्य्योंने बहुत बारीकीके साथ विवेचन किया है। स्व० विज्ञानाचार्य्य जगदीशचन्द्र बसु महाशयने अपने यंत्रो द्वारा यह प्रत्यक्ष सिद्धकर दिखाया, कि हमारे समान वृक्षोंमें चेतना है और वे सुख दु खका अनुभव करते हैं।

जैनधर्मने बताया कि वस्तुका विनाश नहीं होता, उसकी अवस्थाओंमें परिवर्तन अवश्य हुआ करता है। आज विज्ञान भी इसी बातको प्रमाणित करता है कि मूल रूपसे किसी वस्तुका विनाश नहीं होता, किन्तु उसकी पर्यायोंमें फेरफार होता रहता है।

जैनाचार्य्योंने कहा है कि प्रत्येक पदार्थमें अनत शक्तियां मौजूद हैं। क्या आजके वैज्ञानिक एक जड तत्वको लेकर ही अनेक चमत्कारपूर्ण चीजें नहीं दिखाते? लोगोंको ये अवश्य आश्चर्यमें डालने वाली हैं, किन्तु जैनाचार्य्य तो यही कहेंगे कि, 'अभी क्या देखा है, इस प्रकारकी शक्तियोंका समुद्र छुपा पड़ा है।'

जैन दार्शनिकोंने बताया कि सत्य एक रूप न होकर विविध धर्मोंका पुंजरूप है। इसी जैनधर्मकी महान् विभूतिको ही अनेकान्तवादके नामसे स्मरण करते हैं।

इसके पश्चात् आचार्य ... जैन और आगमका
समझनेमें असमर्थ रहे, किन्तु आइन्स्टीन वैज्ञानिक
... सापेक्ष सिद्धान्त (Theory of relativity)
ने जैन सिद्धान्तकी महत्ता विश्वभरके सामने प्रकट
कर दी।

जैन आचार्योंने आत्माके अन्य पदार्थोंसे पृथकता एवं
स्वतंत्रताका विस्तृत विवेचन किया है। यदि ...
विद्या द्वारा इस विषयका, बालकोंके साथ ...
... ... पानेसे मनुष्यको ... और ...
संसार आगेका पता चलेगा।

जैनधर्म बताता है कि मनुष्य स्वयं ...
... ... कर सकता है। संसारमें ...
ही संयोगवियोगके द्वारा विचित्र अवस्था प्रकट करता है।
यह जगत् किसी व्यक्तिविशेषकी रचना है और न
इसके ... ... व्यवस्थापनमें किसी ... परमात्मा एवं
वीतराग आत्माका ... हाथ है। आधुनिक विज्ञान यह
बताता है कि यह जगत् पदार्थोंके ... ... का काम है।
इसमें ... ... ईश्वरको मानने की कोई आवश्यकता
नहीं प्रतीत होती।

जैनधर्मका विज्ञानसे इतना अधिक सम्बन्ध है कि जैन
धर्म ग्रन्थोंमें ... अवैज्ञानिक बात नहीं मिलती।

सत्य सूक्ष्म और गम्भीर है। साधारण मनुष्यका
अनुभव परिमित होता है, इससे कभी २ वस्तुस्वरूप की पूर्ण

तह तक न पहुँच सकनेके कारण किसी २ को यह भ्रम उत्पन्न होने लगता है कि अमुक बात जैनधर्म की विज्ञानसे नहीं मिलती। ऐसे व्यक्तियोंके लिए हमारा यह निवेदन है कि उपरोक्त कतिपय बातोंको देखकर जैनाचार्यों की गम्भीर दृष्टि तथा वैज्ञानिकताका पूर्ण पता चलता है और यह शोध उन आत्मदर्शी मुनीन्द्रोंने यन्त्रादि की सहायताके बिना की थी, जिससे वे महान् ज्ञानी सिद्ध होते हैं। ऐसे विज्ञानवेत्ताओंके कथनके अनुरूप यदि कोई बात समझनेमें दिक्कत हो, तो उसे एकदम मिथ्या कहनेके बदलेमें उसपर फिरसे गहरा विचार करना चाहिए। वर्तमान विज्ञान अभी प्रगतिशील (Progressive) अवस्थामें है और उसमें प्रतिदिन परिवर्तन और परिवर्धन होते रहते हैं। अतएव तनिक ठहरकर देखना चाहिये, तब पता चलेगा कि ऐसी कोई भी बात जैनधर्ममें नहीं है, जिसका विरोध वास्तविक विज्ञान करता हो। किसी यूरोपियन विद्वान्‌ने बहुत ठीक कहा है कि आधुनिक विज्ञान जैसे २ आगे बढ़ता जायगा, वैसे २ जैन-तत्वों की समीचीनता प्रकाशमें आती जायगी।

अतएव विज्ञानके प्रेमियोंका कर्तव्य है, कि वे जैनधर्मके सभी ग्रन्थोंका अध्ययन तथा मनन करें। इस रत्नाकरमें वैज्ञानिक तत्वोंके साथ २ जीवनको विमल एवं सर्वोच्च ... बनाने योग्य अमूल्य तथा अपूर्व रत्न प्राप्त होंगे।

सत्रहवाँ पाठ

उपवास

संसार में अनेक धर्म हैं। बहुत से लोग "धर्म का विषय है, समझ कर उस क्रिया का उपहास किया करते हैं और उसके लाभों से वञ्चित रहते हैं।

यहाँ यह बताने का प्रयत्न किया जायेगा कि उपवास केवल धार्मिक क्रिया ही नहीं है बल्कि स्वास्थ्य के लिये भी नितान्त उपयोगी है।



विवरण कर्मके पाठमें देखें

हिन्दू समाज में चान्द्रायण, एकादशी, प्रदोष, रविवार और मासोपवास इत्यादि का नियम है।

मुसलमानों में रमजान के दिनों में तीस दिन तक रोज़ा रखने की आज्ञा है।

ईसाइयों के लिये बाइबिल में लेंट नामक उपवास बताया गया है। यह चालीस दिन तक करना पड़ता है।

जैनियों में अष्टमी, चतुर्दशी, अष्टाह्निका और पर्युषण आदि पर्वों में यथाशक्ति एकाशन (एक बार भोजन) उपवास और प्रोषधोपवास करने का विधान है। इसके सिवाय जैन मुनि तो आहार की शास्त्रीयविधि न मिलने तक महीनों निराहार रहते हैं और उन्हें किसी प्रकार की मानसिक वेदना का भी अनुभव नहीं होता।

जैनियों के प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव ने लगभग एक वर्ष तक अन्तराय (आहारकी विधि न मिलने) आनेपर उपवास किया था।

वर्तमान में भी धर्म से प्रेरित होकर महीनों के उपवास किये जाते हैं। गुजरात में तो छोटे २ बालक और बालिकायें भी भाद्रपद शुक्लपञ्चमी को निराहार रहते हैं।

राष्ट्रहित की दृष्टि से महात्मा गाँधी ने इक्कीस दिनके उपवास किये थे।

तपस्वी पं० रामचन्द्रजी शर्मा "वीर" ने देवी के सामने पशुओं की बलिदान करने की राक्षसी प्रथा बन्द करने के लिये मॉगरोल (हैदराबाद) आदि में कई दिन के उपवास किये हैं और कलकत्ता के काली के मंदिर में तो एक महीने तक निराहार रहे। अनेक स्थानों पर आपको पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है। जैन धर्म तो मरण समय तक भी उपवास की आज्ञा देता है।

आहार परिहाप्य क्रमश. स्निग्धं विवर्द्धयेत्पानम् ।
स्निग्ध च हापयित्वा खरपान पूरयेत्क्रमशः ॥
खरपानहापनामपि कृत्वा कृत्वोपवासमपि शक्त्या ।
पञ्चनमस्कारमनास्तनु त्यजेत्सर्वयत्नेन ॥

—स्वामी समन्तभद्राचार्य

भावार्थ यह है कि समाधिमरण करने वाला अपनी शक्तिके अनुसार आहार घटाकर नीरस पेय ग्रहण करे और उसे भी छोड़कर पञ्चपरमेष्ठीका ध्यान करते हुये शरीरका त्याग कर दे।

अब उपवासका संक्षेपमें लक्षण बताते हैं।

चतुराहारविसर्जनमुपवासः

—स्वामी समन्तभद्राचार्य

अर्थात् अन्न—दालभात आदि, पान—पानी, शरबत, दूध आदि, खाद्य—लड्डू पेड़ा आदि और लेह्य—रबड़ी आदि चारों प्रकारके भोजनका त्याग करना उपवास है। यह बारह घंटे, चौबीस घंटे और अपनी शक्तिके अनुसार अधिक समय तकके लिये किया जा सकता है।

आजकल उपवास आदिका रूपान्तर हो गया है। यह वास्तवमें आत्माको पवित्र बनाने और अधिक धर्माचरण करनेके लिये किया जाता है। यह नहीं कि कल उपवास है तो आज दूना खालें। हलुवा पूड़ी और गरिष्ठ भोजन करलें। आज उपवास है तो दिनभर आलसमें पड़े रहें।

वर्त्तमानमें स्वास्थ्यपर उपवासका क्या प्रभाव पड़ा है? यह देखिये।

एक समय वह था जब नीरोगताके लिये उपवास करनेकी उपेक्षा की जाती थी किन्तु स्वास्थ्यका अनुभव करने वाले आचार्यों और ग्रन्थकारोंने स्पष्ट वर्णन किया है।

अक्षुधितेनाप्यमृतमुपभुक्तं च भवति विषम्।
—सोमदेवसूरि

अर्थात् भूख न लगने पर खाया हुआ अमृत भी विषके समान होता है।

वैद्यकके प्रसिद्ध ग्रन्थ "भावप्रकाश" में लिखा है कि वात, पित्त या कफ, किसीके विकारसे उत्पन्न होनेवाला रोग केवल उपवास से दूर किया जा सकता है। उपवासके बाद में शरीरमें स्फूर्ति आती है और जठराग्नि भी प्रदीप्त हो उठती है।

अब वर्त्तमानकालमें डाक्टर और वैद्य उपवासका क्या महत्व समझते हैं? यह आप निम्न पंक्तियोंसे सहज ही समझ सकेंगे।

दोनों स्वीकार करते हैं कि कठिनसे कठिन बीमारियाँ केवल उपवाससे दूर की जा सकती हैं।

डाक्टर बरनर मेक्फेडन प्राकृतिक चिकित्साके बड़े विद्वान् हैं। अमेरिकामें आपका College of Physicultotheraphy है। उसमें सभी रोगोंको प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा आराम पहुँचानेकी शिक्षा दी जाती है।

"फिजिकल कलचर" आदि पत्रोंसे स्वास्थ्य पर प्रकाश डालते हैं और उपवास पर अधिक जोर देते हैं।

उनका स्वयं अनुभव है कि पहिले ही पहिले उपवास करनेमें कुछ कष्ट मालुम होता है किंतु २४ दिन बाद भोजन करनेकी इच्छा भी नहीं होती। उपवासके दिनोंमें मानसिक परिश्रम अच्छी तरह किया जा सकता है। उपवास करनेके पहिले दूसरे दिन ढाइ सेर और दूसरे दिन दो सेर वजन कम हो गया, इस तरह सात दिनमें साढ़े सात सेर वजन घट गया। इन दिनोंमें भी लम्बी दौड़ लगाते थे और १००।१०० पाउंडका डंबल उठाते थे। उनका कहना है कि उपवास में शारीरिक शक्तिकी कमीका ख्याल करना भूल है।

मिस हालने लकवासे आराम पानेके चालीस दिनका उपवास किया था। और उपवास के दिनोंमें ६।६ घंटे काम किया करती थीं।

एक आदमीकी आँतमें घाव हो गया था। डाक्टरने नश्तर लगाये बिना २।१ दिनमें मरनेका अंदेशा बताया था लेकिन उसे दस दिनके उपवाससे ही लाभ हो गया।

अमेरिकाके प्रसिद्ध उपन्यास लेखक मि० आप्टन सिंक्लेअर सा० को मन्दाग्निका रोग था। उन्हें १३।१४ दिन के उपवाससे आराम हो गया।

इंग्लैण्डके एक साठ वर्षके मनुष्यके खूनमें खराबी हो गई थी। इस समय इसका वज़न पौनेतीन मन था। पन्द्रह

दिनके उपवासके बाद उसका वजन पौने दो मन रह गया और पूर्ण स्वस्थ हो गया।

रिचर्ड फॉसेलने तो नब्बे दिनका उपवास किया था। इन्हें जलोदर रोग हो गया था। इसके कारण इनका वजन लगभग पाँच मनके होगया था। चलना फिरना कठिन हो गया। आप उपवासके बाद स्वस्थ हो गये।

कुष्ठ, दमा और क्षय जैसे भयकर रोग भी उपवाससे दूर हो जाते हैं।

इसी प्रकार भारतमें भी डाक्टर शावक पी० मदन और वैद्य प० रामेश्वरानन्दजी आदि अनेक उपवास चिकित्साके विशषज्ञ हैं। जिन्होने सैकडो रोगियोको कठिनसे कठिन रोगोस मुक्त कर जीवनदान किया है। २५/३० सालके भयकर पुराने रोग भी केवल उपवाससे दूर किये जाते हैं।

भोजनका पचना और मलका बाहर निकलना बहुत आवश्यक है। ऐसा न होनेसे ही रोग पैदा होते हैं। उपवास करनेसे दोनो शक्तियाँ बराबर काम करने लगती हैं। शरीरके भीतरका विष जब नष्ट हो जाता है तब अच्छी भूख मालूम होने लगती है।

उपवासके बादमें इन्द्रियोमें विशेष स्फूर्त्ति उत्पन्न हो जाती है। साथ ही शारीरिक व मानसिक बल उन्नत होता जाता है।

अधिक क्या, पशु भी अस्वस्थ होनेपर खाना पीना छोड देते हैं।

इस विषयकी जानकारीके लिये Fasting for Health और "उपवास चिकित्सा" आदि पुस्तकोंका अध्ययन करना चाहिये।

इसलिये उपवास अथवा नियमित भोजन करना धार्मिक स्वास्थ्यकी दृष्टिसे अच्छा होनेके साथ ही राष्ट्र और समाजकी परिस्थितिका ध्यान रखने वालेके लिये भी अत्यन्त आवश्यक है।

प्रश्न

१ भिन्न २ सम्प्रदायोंके उपवासोंका वर्णन करो।

२ उपवास किसे कहते हैं।

३ उपवास करनेसे क्या लाभ है।

अठारहवाँ

कर्म्म (ब)

चार अघातिया कर्म्म।

१ वेदनीयकर्म्म—जो कर्म्म जीवको सुख दुःख दे या सुख दुःखकी सामग्री जुटा दे। इस कर्म्मके उदयसे जीव किसी पदार्थको इष्ट और किसी पदार्थको अनिष्ट समझने लगता है और उससे सुख तथा दुःखका अनुभव करने लगता है। सुख और दुःख देना वेदनीय कर्म्मका ही काम है।

जैसे बलवीरसिंहने शहद लपेटी हुई तलवार चाटो। शहद चाटनेसे मीठा लगा तो सुख हुवा और तलवारसे जीभ कटने पर दु ख हुआ।

इसलिये वेदनीय कर्म दो प्रकारका होता है—१ साता वेदनीय और २ असातावेदनीय।

सातावेदनीयके उदयसे सुख देनेवाली सामग्री (वस्तु) मिलती है और दु ख देनेवाली वस्तु असातावेदनीयके उदयसे मिलती है।

सब जीवो पर दयाभाव रखना, व्रतोका पालन करना, आहारदान, ज्ञानदान, औषधिदान और अभयदान करना, क्षमा धारण करना, लोभ नहीं करना और सतोष रखना आदि कार्यांसे सातावेदनीय कर्मका बन्ध होता है।

दु ख करना, शोक करना, पश्चात्ताप (पछतावा) करना, एस रोना जिसे सुनकर दूसरोका रोना आजाने और मारना-पीटना वगैरहसे असातावेदनीय कर्मका बन्ध होता है।

२ आयुकर्म—इस कर्मके कारण आत्मा, नरक, तिर्यञ्च, देव और मनुष्य इन चार गतियोंमें, कोई एक शरीर धारणकर अपने कर्मानुसार किसी भी गतिमें, रुका रहना पडता है। जैसे एक मनुष्यके पाँव काठकी बेडीमें डाल दिये जाते हैं फिर वह इधर उधर नहीं चल फिर सकता। इसी प्रकार आयुकर्मके उदयसे नियतकालतक मनुष्य आदि गतियोमें शरीर धारण करता है। आयु बीतनेपर अपने २ कर्मोंके अनुसार नरक, तिर्यञ्च, देव अथवा मनुष्यगतिमें जन्म लेता

है। यह आयु कर्मकी पराधीनता है। किसी भी एक गतिमें रोके रखना इसका काम है।



(आयुकर्म चित्र)

बहुत आरम्भ (सेना, कृषि, व्यापार आदि) और परिग्रह (धनधान्य आदि) रखनेसे नरक आयुका बंध होता है। ऐसा करनेसे जीवको नरक गतिके दुःख उठाने पड़ेंगे।

छल कपट करने, दूसरोंको ठगने, दगा करने और जालसाजी आदि करनेसे तिर्यञ्च आयुका बंध होता है। ऐसा करनेसे पशु, पक्षी और वृक्ष आदिका शरीर धारण करना पड़ेगा। थोड़ा आरम्भ और परिग्रह रखनेसे, कोमल परिणामोंसे, परोपकार करने और जीवोंपर दया आदि करनेसे मनुष्य आयुका बंध होता है।

व्रत उपवास आदि करने, शान्तिपूर्वक भूख, प्यास आदि सहने, और सत्यधर्मका प्रचार करने एव उसकी प्रभावना करनेसे देवायुका वन्ध होता है। ऐसे कामोंके करनेसे भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क और कल्पवासी देवोंमें जन्म होता है।

३ नामकर्म—के उदयसे अनेक प्रकारके शरीर, इन्द्रियाँ, अङ्ग (हाथ, पैर आदि) और उपाङ्ग (अँगुली आदि) आदि की रचना होती है। जैसे चित्रकार देव, नारकी, मनुष्य और तिर्यञ्च (हाथी, मछली, तोता, पेड आदि अनेक प्रकार) के चित्र वनाता है ठीक उसी प्रकार नामकर्म भी सुरूप (सुडौल) और कुरूप (वेडौल), छोटे, बडे आदि अनेक प्रकारके शरीर वनाता है। यह कर्म भी दो प्रकारका है। १ शुभ नामकर्म और २ अशुभ नामकर्म।

मन, वचन और कायको सरल रखने, किसीका वुरा न विचारने, और किसीका वुरा न करने, आपसमें लडाई नहीं करने और धर्मात्मा पुरुषोंको देखकर प्रसन्न होने आदि से शुभ नामकर्मका वन्ध होता है।

मन, वचन और कायमें कुटिलता करने, मिथ्यात्वी होने, घमड करने, आपसमें लडने, मिथ्या देवोंकी पूजा करने, दूसरोंका वुरा विचारने, दूसरोंकी नकल करने, चुगली खाने और दूसरोंको चिडाने, तग करने वगैरहसे अशुभनाम कर्मका वन्ध होता है।

किसीका सिर
लम्बा व किसीका छोटा
(चीनी लोगों जैसी) नाक
घोड़ खुरपा जैसे दांतवाला
राक्षस जैसा काला भयानक



विवरण फर्मके पाठमें देखें

और कुरूप होता है। किसीका सुन्दर जै... किसीका देव जैसा। यह सब नामकर्मकी महिमा...

४ गोत्रकर्म—ऊंचे और नीचे कुलमें पैदा... जैसे कुम्भकार (कुम्हार) छोटे और बड़े सब तर... बनाता है वैसे ही नामकर्म भी जीवोंका ऊंचा (बड़ा... नीचा (छोटा) बनाता रहता है।

इसके दो भेद होते हैं—१ उच्चगोत्र और २ नीच गोत्र।

उच्चगोत्रकर्म—के उदयसे उत्तम आचरण करनेवाले लोकमान्य कुलमें उत्पन्न होता है।

नीचगोत्रकर्म—के उदयसे जीव बुरे आचरण करनेवाले लोकनिंद्य कुलमें उत्पन्न होता है।

दूसरके गुणोकी प्रशंसा करने, अपनेसे अधिक गुणवालो का आदर करने तथा अपनी विद्या, धन और गुण आदिका मान न करने आदिसे उच्चगोत्रका बन्ध होता है।

दूसरेकी निन्दा करने और अपनी प्रशंसा करने, सच्चेदेव, शास्त्र, और गुरुका अविनय करने और अपनी जाति, कुल, विद्या, धन, शरीर और प्रभुता आदिका अभिमान करनेसे नीचगोत्रका बन्ध होता है।

बालको! कर्म की महिमा देखो। कर्म की महिमा के साथ कर्म (पुरुषार्थ) की महिमा का भी अनुभव करो। कर्म का अर्थ केवल भाग्य और पराये भरोसे ही रहना नहीं है। कर्म का अर्थ पुरुषार्थ भी है। पुरुषार्थ का आश्रय लेकर ही इस अपार संसार समुद्र से महावीर स्वामी आदि ने उद्धार पाया है। वे कर्म और आत्मा का वास्तविक स्वरूप समझ कर और कर्मों को समूल नष्ट करने का अनुपम पुरुषार्थ कर, नित्य, निरञ्जन, निर्विकार तथा अनन्त ज्ञान और सुखके निधान बन गये।

प्रश्न

१ कर्म किसे कहते हैं ?
२ कर्म कितने होते हैं, उनका संक्षेप में लक्षण कहो।
३ कर्मों को दृष्टान्तों से स्पष्ट करो।
४ कर्म में भाग्य और पुरुषार्थ को स्पष्ट करो।
५ इस पाठ से तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है ?

उन्नीसवाँ पाठ

वीरोपदेश

[ले०—पन्नालाल 'वसन्त' साहित्याचार्य]

धर्म निजकी वस्तु है पर जाति लौकिक¹ बात ही है।
जातिके पीछे सताना हीनको हठवाद ही है ॥१॥
जो बात तुमको है बुरी वह अन्यको हो क्यों भली ?
सब जन्तुओंमें एक सी है आतमा मुदसे रखो ॥२॥
स्वार्थवश परको सताना धर्म मानवका नहीं है।
तड़फड़ाते दीन उनको ताड़नेमें श्रेय² नहीं है ॥३॥
कालका परिणाम लखकर रूढ़ि मिथ्या तोड़ देना।
है बुरा बिलकुल नहीं यह कार्य करके यश लेना ॥४॥
चाहते यदि सौख्य हो तुम विश्वकी वक्ष स्थलीपर।
तो बहाओ रात दिन तुम प्रेमके रमणीय निर्झर ॥५॥

सत्यकी ही खोजमें तुम जीवनी सारी बिता दो।
दम्भ[1]को, विद्वेषको अभिमानको बिलकुल हटा दो ॥६॥
इन्द्रियोंको जीतकर तुम विश्वविजयी भी कहाओ।
तेज निजका प्राप्तकर फिर भीरुता मनकी भगाओ ॥७॥
तुच्छ सुखमें तू लुभाकर मर्त्य[4] भव क्यों खो रहा है।
बावले! क्यों काच लेकर रत्न सच्चा खो रहा है ॥८॥
आज जो उन्नत बना है वह कभी अवनत बनेगा।
आज जो नीचा कहाता वह कभी ऊँचा बनेगा ॥९॥
क्यों बडप्पनका तमाशा मूढ़! तू जगमें लगाता?
क्यों बुरेको तू बुरा कह द्वेष मनका है जगाता ॥१०॥
आदि दे उपदेश जगको वीरवर! तुमने जगाया।
भूमिको क्षण भरही में स्वर्ग सा तुमने बनाया ॥११॥

प्रश्न

१ धर्म क्या है?
२ संसारका सुख कैसा है?
३ महावीरस्वामीने क्या उपदेश दिया?

१ जड़वाद। २ कल्याण। ३ आडम्बर। ४ मनुष्यजन्म।

मुद्रक—रामेश्वर पाठक, तारा यन्त्रालय, काशी।

प्रश्न

१ कर्म किसे कहते हैं ?
२ कर्म कितने होते हैं, उनका संक्षेप में लक्षण कहो।
३ कर्मों को दृष्टान्तों से स्पष्ट करो।
४ कर्म में भाग्य और पुरुषार्थ को स्पष्ट करो।
५ इस पाठ से तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है ?

उन्नीसवाँ पाठ

वीरोपदेश

[ले०—पन्नालाल 'वसन्त' साहित्याचार्य]

धर्म निजकी वस्तु है पर जाति भौतिक[1] वाद ही है।
जातिके पीछे सताना हीनता हठवाद ही है ॥१॥
जो बात तुमको है बुरी वह अन्यको हो क्यों भली ?
सब जन्तुओंमें एक सी है आतमा सुखसे रली ॥२॥
स्वार्थवश परको सताना धर्म मानवका नहीं है।
धडफडाते दीन जनको ताडनेमें शिव[2] नहीं है ॥३॥
कालका परिणाम लखकर रूढ़ि मिथ्या तोड देना।
है बुरा बिलकुल नहीं यह कार्य करके देख लेना ॥४॥
चाहते यदि सौख्य हो तुम विश्वको वक्ष स्थलीपर।
तो बहाओ रात दिन तुम प्रेमके रमणीय निर्झर ॥५॥

श्रानन्दचन्द्र जी उड़ेसरीय —छात्रों को इनसे विशेष
हो सकेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

ना० दि० जैन परिषद् परीक्षा बोर्ड के सेक्रेटरी
उग्रसेन जी —आपका परिश्रम सराहनीय है।

न्यायसूरि प० जीवन्धर जी न्यायतीर्थ इन्दौर — ये
तैयार इतने अधिक उपयोगी हैं कि इन्हीं पुस्तकों द्वारा
बच्चों को धार्मिक शिक्षण हुआ।

सिद्धान्त शास्त्री प० दयाचन्द्र जी न्यायतीर्थ प्रधाना
ध्यापक व साहित्याचार्य प० पन्नालाल जी "वसन्त" साहित्या
चार्य, स मु पाठशाला, सागर—आशा है कि इनसे अजैन
छात्रों की कठिनाइयाँ दूर होंगी।

बाबू दशरथलाल जी स मन्त्री परवार महासभा व
बा गु जैन महिलाश्रम, कन्याशाला आदि—सभी प्रान्तों में
ये पुस्तकें पाठ्य पुस्तकों का स्थान लिये बिना नहीं रहेगा।
अपने आधीन शिक्षा संस्थाओं में प्रचलित करने
रहा हूँ।

बाबू जगरूपसहाय जी एम एल ए वकील हाइकोर्ट
व सरवज सा[illegible] सर्वार्थसिद्धि—वृत्तिके अनुवादक—
पुस्तकों का इबारत निहायत सरल शब्दों में लिखी है। नक्शा
देकर विषय का न कठिन विषयों का समझाया गया है। पुस्तक
[illegible] स्कूलों में पढ़ाने योग्य है।

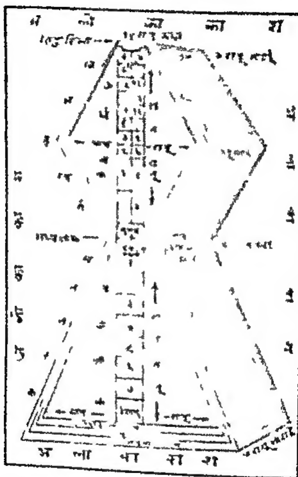
साहित्यरत्न, शास्त्री प० हीरालाल जी "कौशल"
[illegible] — इन से बच्चों को ज्ञान प्राप्त करने में बड़ा सरलता
[illegible] तथा वह बड़े प्रेम से पढ़ेंगे।

साहित्यरत्न बाबू फूलचन्द्र जी वकील—बच्चों को धार्मिक
प्रारम्भिक शिक्षा के लिये ये पुस्तकें अत्यन्त उपयोगी है।

स्वामी कर्मानन्द जी जैन—जैन समाज में बालोपयोगी
साहित्य का आवश्यकता की पूर्ति इन पुस्तकों ने कर दी है।
इन पुस्तकों द्वारा गागर में सागर भर दिया गया है।

[illegible] का चित्र

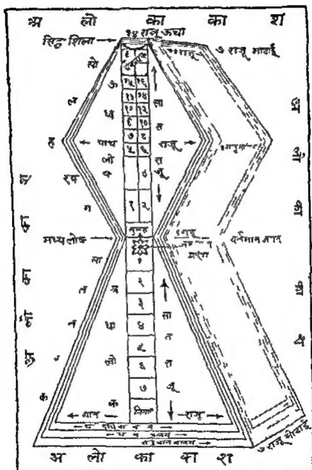
[illegible]



चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष संठान ।
तामें जीव अनादिते, भरमत है बिन ज्ञान ॥—भूधरदास ।

तीनलोक का चित्र

इसका वर्णन तीनलोक के पाठ में देखिये



चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष संठान ।
तामें जीव अनादितैं, भरमत हैं बिन ज्ञान ॥—भूधरदास ।

०. अमोलकचन्द्र जी उड़ेसरीय —धर्म को इनसे विशेष बोध हो सकेगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

भा० दि० जैन परिषद् परीक्षा बोर्ड के सेक्रेटरी मास्टर उग्रसेनजी —आपका परिश्रम सराहनीय है।

न्यायसूरि पं० जीवन्धर जी न्यायतीर्थ इन्दौर— ये चारों भाग इतने अधिक उपयोगी हैं कि इन्हीं पुस्तकों द्वारा हम अपने बच्चों को धार्मिक शिक्षण दूंगा।

सिद्धान्त शास्त्री पं० दयाचन्द्र जी न्यायतीर्थ प्रधाना ध्यापक व साहित्याचार्य पं० पन्नालाल जी "वसन्त" साहित्या ध्यापक, स सु पाठशाला, सागर—आशा है कि इनसे अजैन छात्रों की कठिनाइयाँ दूर होंगी।

बाबू दशरथलाल जी स मन्त्री परवार महासभा व मन्त्री गु जैन महिलाश्रम, कन्याशाला आदि—सभी प्रान्तों में आपकी पुस्तकें पाठ्य पुस्तकों का स्थान लिये बिना नहीं रहेंगी। मैं शीघ्र ही अपने आधीन शिक्षा संस्थाओं में प्रचलित करने वाला हूँ।

बाबू जगरूपसहाय जी एम एल बी वकील हाइकोर्ट मुसिफ व सबजज सार्थ-सर्वार्थसिद्धि—वृत्तिके अनुवादक—पुस्तकों की इबारत निहायत सरल शब्दों में लिखी है। नकशे द्वारा विशेष रूप से कठिन विषयों को समझाया गया है। पुस्तकें भिन्न २ स्कूलों में पढ़ाने योग्य हैं।

साहित्यरत्न, शास्त्री पं० हीरालाल जी "कौशल" न्यायतीर्थ — इन से बच्चों को ज्ञान प्राप्त करने में बड़ी सरलता होगी तथा वह बड़े प्रेम से पढ़ेंगे।

साहित्यरत्न बाबू फूलचन्द्र जी वकील—बच्चों की धार्मिक प्रारम्भिक शिक्षा के लिये ये पुस्तकें अत्यन्त उपयोगी हैं।

स्वामी कर्मानन्द जी जैन—जैन समाज में बालोपयोगी साहित्य की आवश्यकता की पूर्ति इन पुस्तकों ने कर दी है। इन पुस्तकों द्वारा गागर में सागर भर दिया गया है।

सा विद्या या विमुक्तये
आदर्श साहित्य संघ